संगम

हिन्दी पत्रिका

सितंबर 2024

ज्ञानम् अनन्तम्
IIM
TRICHY

भारतीय प्रबन्धन संस्थान तिरुचिरापल्ली

Indian Institute of Management Tiruchirappalli

पत्रिका समिति के सदस्यगण:
प्रो. जंग बहादुर सिंह
प्रो. अभिषेक तोतावार
प्रो. प्रवीण पी. तांबे
प्रो. वासवी भट्ट
प्रो. रमेंद्र प्रताप सिंह
डॉ. के. इलवल्गन
सुश्री सजीला एम

प्रतिलिप्याधिकार
भारतीय प्रबन्धन संस्थान तिरुचिरापल्ली
सर्वाधिकार सुरक्षित
इस पुस्तक की किसी भी सामग्री, कविता, लेख, आलेख आदि को कॉपीराइट स्वामी की बिना लिखित अनुमति के किसी भी रूप में जैसे फोटोस्टेट, माइक्रोफिल्म, जेरोग्राफी या अन्य किसी रूप में किसी भी सूचना पुनर्प्राप्ति प्रणाली, इलेक्ट्रॉनिक या मेकैनिकल रूप में शामिल कर पुनरुत्पादित नहीं किया जा सकता है।

मूल रूप से भारत में प्रकाशित
पुस्तक : संगम

© भारतीय प्रबन्धन संस्थान तिरुचिरापल्ली
संस्करण : चतुर्थ
वर्ष : 2024

प्रकाशक: भारतीय प्रबन्धन संस्थान तिरुचिरापल्ली

पुस्तक डिजाइन एवं मुद्रक:
सिग्नस एडवरटाइजिंग (इंडिया) प्रा. लि. बंगाल इको इंटेलिजेंट पार्क, टावर-1, 13वां तल, यूनिट 29,
ब्लॉक ईएम-3, सेक्टर-V, साल्टलेक, कोलकाता, पश्चिम बंगाल – 700091

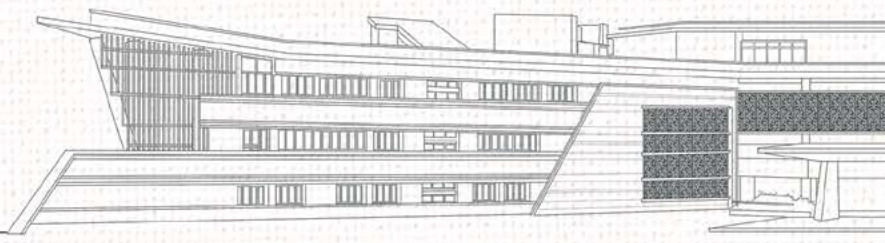

विषय-सूची

सम्पादकीय	2
निदेशक का संदेश	3
कहानी	
दामिन गृह	4
उड़ान	6
चेन्नई: अजनबी शहर और यादगार पल	8
मुस्कुराती हुई लड़की	9
प्रकृति	10
सबक	12
काव्य	
गुरु के प्रति श्रद्धापूर्ण उद्गार	13
गणतंत्र का अमतृ संदेश	15
पिता	16
'माँ' नाम है एक रिश्ते का	19
मेरा परिचय - मैं कौन	20
क्या पाया और क्या खोया?	21
अधूरी बातें	22
मज़हब	23
हिन्दी मेरी	24
इशारों इशारों में बातें हुई थी	25
यादें	26
कसमें वादे	27
आया हूँ	28
ईश्वर और मैं	29
वफादार पहरेदार (ट्रॉबी - मेरा कुत्ता)	30
करते ही नहीं	31
ज़रूरी है, माँ	32
मैं गीत नये फ़िर लिखूँगा	33
मेरी कहानी	34
स्वदेशानुराग	35
राम-करण	36
स्वयं की खोज	37
निबंध	
नाम में क्या रखा है?	38
धकियाती संस्कृति (व्यंग्य)	39
गंगा की स्मृतियां	40
स्वेच्छा और वेदांत	41
म से माँ	43
बेगमगंज: एक कस्बा जिसे मैं नानी-घर कहता हूँ	44
वयस्कता में बचपन की खोज	45
पहाड़ और ईश्वर	46
हरित श्रृंगार एक वृक्ष	47
बालक वर्ग	
परिश्रम	48
टाइम मशीन	49
समुद्र कन्या	50
प्रकृति	51
एक सुंदर पौधा	52
किताब की समीक्षा	
मरीचिका (ज्ञान चतुर्वेदी)	58

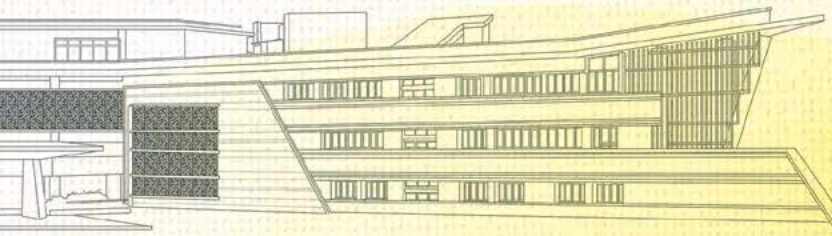

सम्पादकीय

प्रिय पाठकों,

हम अत्यंत हर्ष और गर्व के साथ अपनी वार्षिक हिन्दी पत्रिका "संगम" का चौथा संस्करण आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं। प्रत्येक वर्ष हमारी पत्रिका विचारों और अभिव्यक्तियों के विशाल और विविध परिदृश्य लेकर अपनी यात्रा पर निकलती है और यह संस्करण इसी आदर्श का एक और उदाहरण है।

सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, हम अपने मुख्य आधार और हमारे निदेशक डॉ. पवन कुमार सिंह के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करना चाहते हैं, जिनके मार्गदर्शन ने "संगम" को आज इस रूप में निरूपित करने में अग्रणी भूमिका निभाई है। ' संगम' पत्रिका के दृष्टिकोण में उनके विश्वास और उनके प्रोत्साहन ने हमें रचनात्मकता और अभिव्यक्ति की सीमाओं को और आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित किया है।

इस वर्ष "संगम" का कवर पेज हम सभी के हृदय में विशेष महत्व रखता है, क्योंकि इसमें हमारे प्यारे भारत का राष्ट्रीय ध्वज दर्शाया गया है जो एक कलाकृति, एक प्रतीक मात्र का प्रतिनिधित्व ही नहीं अपितु हमें व्याख्या और अर्थ-निर्माण की गहन प्रक्रिया में संलग्न करता है। यह एक शक्तिशाली आधार है जिसके माध्यम से व्यक्तिगत, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भ मिलते हैं, और जिससे भावनाओं और मूल्यों का एक समृद्ध सम्मिश्रण बनता है। सेंसमेकिंग प्रक्रिया के तहत प्रत्येक जन अपने प्रतीकों का वर्णन करते हैं और उन्हें अर्थ देते हैं, और ये हमारे राष्ट्रीय ध्वज को देखने के तरीके में बखूबी अंतर्निहित है। जब हम अशोक चक्र के साथ केसरिया, सफेद और हरे रंग की धारियों को देखते हैं, तो इसमें केवल रंग और पैटर्न ही नहीं दृष्टिगत होते हैं, बल्कि इनसे एकता, गर्व और अपनेपन की गहरी भावना पैदा होती है। ये भावनाएं और अर्थ हमारे जीवन के अनुभवों और हमारे समाज की साझा कहानियों के माध्यम से समझे जाते हैं। भारतीय राष्ट्रीय ध्वज, हमारे देश की स्वतंत्रता, संघर्ष और उपलब्धियों के प्रतीक के रूप में, एक सामूहिक समावेश का प्रतीक है जो व्यक्तियों और व्यापक समुदाय दोनों के लिए इसके महत्व को और मज़बूत करता है।

यह सामूहिक वृत्तांत हमारे देश भर के कवियों की रचनाओं में बहुत ही खूबसूरत तरीके से व्यक्त की गई है। झंडा ऊँचा रहे हमारा (श्री श्याम लाल गुप्त द्वारा) जैसी सदाबहार कविता लोगों के बीच तिरंगे के महत्व और उससे उत्पन्न शक्ति और गर्व का भाव स्थापित करती है। श्री सुब्रमण्यम भारती द्वारा रचित थायिन मणिकोडी पारीर जैसी कविताएँ, और इनके जैसी कई अन्य कृतियां दर्शाती हैं कि कैसे विभिन्न भाषाएँ साझा आख्यानों को बनाने और प्रसारित करने के माध्यम के रूप में काम करती हैं, जिनमें भारत की राष्ट्रीय पहचान, गौरव और विविधता में एकता की एक सामान्य व्याख्या और अर्थ निहित है।

जब हम ध्वज के महत्व पर विचार करते हैं, तो हम अपनी पत्रिका के शीर्षक "संगम" के साथ एक समानांतर भाव भी पाते हैं, जिसका अर्थ है "संप्रवाह।" जिस तरह ध्वज विविध भावनाओं और कहानियों को एक शक्तिशाली प्रतीक में जोड़ता है, उसी तरह "संगम" विभिन्न दृष्टिकोणों, विचारों और अभिव्यक्तियों के संलयन का प्रतिनिधित्व करता है। हमारा मानना है कि संगम इसके भागों के योग से कहीं अधिक बड़ी चीज़ की ओर ले जाता है, और एक ऐसा स्थान बनाता है जहाँ विचार संबद्ध हो सकते हैं, परस्पर क्रिया कर सकते हैं और रचनात्मकता और समझ के नए रूपों में विकसित हो सकते हैं।

इस वर्ष, हम अपनी पत्रिका में एक नया खंड शुरू करने के लिए भी उत्साहित हैं, जिसमें मौलिक कलाकृति का स्वागत किया जाएगा जिनमें चित्र, पेंटिंग, रेखाचित्र और तस्वीरें आदि शामिल हैं। इसमें प्रत्येक प्रविष्टि के साथ- साथ हिन्दी में उनका संक्षिप्त विवरण भी दिया गया है, जिससे योगदानकर्ता अपनी रचनात्मकता को दृश्य प्रारूप में भी व्यक्त करने में सक्षम होंगे। यह नया खंड "संगम" की विविधता और समृद्धि में एक और परत जोड़ता है, जो हमारे समुदाय की कलात्मक प्रतिभाओं को भी प्रदर्शित करता है।

प्रिय पाठकों, जब आप "संगम" के इस चौथे संस्करण के पन्नों को पढ़ेंगे, तो हमें उम्मीद है कि आपको भी हमारे जैसा गर्व और जुड़ाव महसूस होगा। यह पत्रिका सिर्फ़ लेखों और कलाकृतियों का संग्रह नहीं है; यह हमारी साझा यात्रा, हमारी सामूहिक कथा और उन आदर्शों के प्रति हमारी प्रतिबद्धता का प्रतिबिंब है जो हमें एक समुदाय के रूप में एक साथ बांधते हैं।

डॉ. पवन कुमार सिंह
निदेशक

निदेशक का संदेश

संस्थान की वार्षिक हिन्दी पत्रिका संगम के इस चतुर्थ संस्करण को आप तक पहुँचाने में अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है। हिन्दी के उत्थान के हमारे प्रयासों के क्रम में हमारी टीम ने उत्साहपूर्वक सहयोग किया है एवं पत्रिका में अपनी रचनाओं को मनोयोगपूर्वक लिखकर संस्थान के सभी वर्गों ने महती योगदान प्रदान किया है। सभी को हार्दिक साधुवाद!

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने कहा है— निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल; बिन निज भाषा - ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल। अर्थात, सभी उन्नति के जड़ में अपनी भाषा की उन्नति ही मूल कारण है, एवं अपनी भाषा के ज्ञान के बिना हृदय में धँसे कष्टप्रद काँटे से मुक्ति नहीं मिलती । इस कथन के गुहार में छिपी वेदना का क्या तात्पर्य है? इसका तात्पर्य स्पष्ट है कि अपने मूल स्वभाव, मूल प्रकृति, मूल संस्कार, मूल संस्कृति या मूल भाषा से छिटक जाने पर न तो उन्नति ही प्राप्त होती है, और न ही मनुष्य दुःख से मुक्त हो पाता है । अर्थात् न तो बाह्य जगत में लाभ मिलता है, और न ही अंतर्जगत में आत्मोत्थान के पथ पर यात्रा सुदृढ़ होती है। अंश का अंशी के प्रति पीठ करके खड़े रहना मूल स्वभाव से भटका देता है, आनन्द के भाव से च्युत होकर दुःखों को निमंत्रित करने के लिए उद्यत रहना मूल प्रकृति से विक्षेप उत्पन्न करता है, परम्परा से छने हुए विधानों का परित्याग संस्कार को क्षीण कर देता है, मनुष्य को मनुष्यता प्रदान करने वाली कालान्तर से परिशुद्ध की गई व्यवहार-श्रृंखला के प्रति उदासीनता संस्कृति को दुर्बल कर देती है, एवं मूल भाषा के प्रति अन्यमनस्कता मौलिकता से दूर कर अवनति का कारक हो जाता है । भारतेन्दु की उपरोक्त व्यथा इन्हीं बातों की ओर इंगित करती प्रतीत होती है।

भारतेन्दु जब अपनी भाषा की वकालत करते हैं तो इसका अर्थ कतई नहीं है कि वह अन्य भाषाओं व उनमें निहित ज्ञान का निरोध करते हैं, बल्कि वह तो महोपनिषद के वाक्य, वसुधैव कुटुम्बकम् की उद्घोषणा में निहित भाव के सुगन्ध को ही निःसृत करते हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि आगे वह कहते हैं — विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार सब देसन से लै करहू, भाषा माहि प्रचार । अर्थात, अन्यान्य देशों में अनेक प्रकार की कलाएँ, शिक्षा व ज्ञान विकसित होते हैं, परन्तु इन सभी को अन्तर्देशीय व्यापकता अपनी भाषा के माध्यम से प्रदत्त हों।

हमारा देश, भारत कहलाता है और इस शब्द का अर्थ है, वह भूमि जो ज्ञान में रत है। भारत में विविधताएँ तो हैं परन्तु इसका मूल प्राण एक ही है। संविधान के आठवें अनुच्छेद में 22 भारतीय भाषाएँ समाविष्ट हैं। इसके इतर कई अन्य भाषाओं में से लगभग 40 अन्य भारतीय भाषाओं की भी अपने-अपने क्षेत्रों में व्यापकता है। इन सभी भाषाओं का उपयोग एवं विकास होना चाहिए। हिन्दी भाषा भारत की सबसे अधिक प्रयुक्त भाषा है और केन्द्र की यह राजकीय भाषा है। भारत की आत्मा को समझने के लिए हिन्दी व देवनागरी लिपि सबसे सहज व सरल मार्ग है।

आप जितने भी कार्य प्रतिपादित करते हैं, उन्हें दो वर्गों में बाँट सकते हैं । एक वर्ग में वे सभी कार्य रखे जा सकते हैं जिन्हें आपको पूरी परिपक्वता से सम्पादित करना है। दूसरे वर्ग में उन कार्यों को रखा जा सकता है जिन्हें अपनी वर्तमान क्षमता के अनुसार जितना बन पड़े उतना कर डालिए, तत्पश्चात परिपक्वता आते-आते आ ही जाएगी। अपने जीवन में व कार्यालयीन उत्तरदायित्व के संदर्भ में हिन्दी का प्रयोग दूसरे वर्ग के कार्यों में रखा जा सकता है, यदि हिन्दी सीखने के क्रम में आप प्रारम्भिक सीढ़ियों पर हैं। प्रारम्भ तो करिये, आपको शनैः-शनैः हिन्दी भाषा अपना रस प्रदान करने लगेगी। आइये, हिन्दी भाषा की मर्यादा के संरक्षण व संवर्द्धन में हम सभी भागीदार बनें।

हमारे प्रयासों द्वारा आप तक पहुँची इस पत्रिका का आनन्द लें एवं अनुरोध है कि इसके उत्कर्ष के लिए अपने बहुमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराएँ।

दामिन गृह

अचानक तालियों के शोर से मेरा ध्यान भंग हुआ। आज एक विशेष कार्यक्रम था जिसमें श्रीमती नीता अम्बानी एक आश्रय घर का उद्घाटन कर रहीं थीं। यह गृह दो भागों में विभाजित था एक भाग उन महिलाओं के लिए था सो समाज से प्रताड़ित थीं, त्यागी गयी थीं, निकाली गई थीं, ठुकराई गई थीं, विधवाएं थीं जिनका कोई सहारा नहीं था, वे थीं जिन्हें उनके बच्चों, पतियों ने त्याग दिया था। दस एकड़ के गृह का दूसरा भाग उन बालिकाओं के लिए था जो अनाथ थीं, कमजोर वर्ग की थीं, और जिनके माता-पिता ने उन्हें लड़की होने के कारण छोड़ दिया था। मेरा नाम शालिनी है और मैं कैसे इस गृह से जुड़ी हूँ यह आगे बताती हूँ। मैं एक कंपनी से जुड़ी हूँ जो रिलायंस ग्रुप के लिए रेडीमेड कपड़े सप्लाई करती है। मैं कार्यक्रम में व्यस्त थी। अचानक एक पत्रकार ने सवाल पूछा कि आपने दामिन गृह ही क्यों नाम चुना। जवाब देते हुए मेरी आँखें भर आयीं और मेरी यादें मुझे 15 साल पहले ले गयीं।

मैं एक निम्न मध्यम वर्ग से सम्बन्ध रखती हूँ। मेरे माता-पिता ने ग्रेजुएट होते ही मेरे लिए लड़के देखने शुरू कर दिया। परन्तु दहेज़ की मांग और कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण कोई लड़का नहीं मिल पा रहा था। अचानक एक ऐसा रिश्ता आया जिसे मैंने सुनते ही मना कर दिया पर लड़के वालों के जोर देने पर मैं मिलने को तैयार हो गयी। दरअसल लड़के की दूसरी शादी थी, पहली पत्नी का देहांत हो गया था और उसकी एक बच्ची थी जो डेढ़ साल की थी नाम था दामिनी। मैं बड़े अनमने मन से उनके परिवार से मिलने पहुंची लड़के से मुलाकात हुई। उनकी पर्सनालिटी काफी प्रभावशाली थी पर जिंदगी के थपेड़ों ने उन्हें मुरझा दिया था। मेरा मन फिर भी नहीं मान रहा था और मै ना बोलने वाली थी "क्या मैं अपने से 10 साल बड़े पुरुष के लिए ही बनी हूँ", तभी अचानक एक छोटी सी जान आ कर मुझसे लिपट गई और उसके मुंह से निकला सिर्फ एक शब्द "माँ"। मैं जैसे अंदर ही अंदर पिघल गई और उसे गले से लगा लिया वही दामिनी थी, बहुत सौम्य और सुन्दर गुड़िया सी। इसके बाद क्या था, मैंने हामी भर दी और हमारा विवाह संपन्न हो गया सीधी-साधी रीति से।

मैं घर आ गयी मुझे सब तरफ से प्यार मिलता था खास कर दामिनी से। मैं और दामिनी बहुत घुलमिल गए। दामिनी बड़ी होने लगी और मैं भी अपने मध्यमवर्ग परिवार का हिस्सा बन गयी। 5 साल निकल गए। दामिनी 7 साल की होने को आयी तभी हमारी बुआ घर पर आईं उन्होंने मेरे कान में बात डाली और कई बार डाली कि तेरी अपनी भी संतान होनी चाहिए। पहले तो मैंने नजरअंदाज किया पर बार-बार बात होने पर मैंने इसको गंभीरता से लिया और बार-बार राहुल (मेरे पति) को समझाने के बाद मैं थोड़े समय बाद गर्भवती हो गयी। इसके पश्चात मेने एक पुत्र को जन्म दिया। पर इसके बाद मेरा ध्यान ज्यादा रोहन पर लगने लगा। दामिनी भी यह देख रही थी। वह कई बार मेरे नजदीक आने का प्रयास करती और मैं उसे झिड़क देती। वह अपने आप में रहने लगी। कई बार अपने कमरे में कुछ लखती थी, कुछ चित्रांकन करती थी।

कई बार रोहन के साथ खेलने की कोशिश करती थी, कई बार रोहन का काम भी करती थी। पर रोहन बहुत ही अव्यवस्थित था उसके खिलौने इधर-उधर बिखरे रहते। मैं दामिनी से भी यही काम करवाती थी। कई बार वह काफी अनमने मन से करती थी। वह 11 साल की हो रही थी और रोहन पांच साल का हो रहा था। मैं अभी भी दामिनी की तरफ जयादा ध्यान नहीं देती थी। दामिनी अभी बड़ी हो रही और बातें समझ रही थी। हाँ उसके पढ़ने-लिखने एवं कपड़ों और उसके चित्रांकन और लिखने के शौक को राहुल और मैं हमेशा बढ़ावा देते थे। दामिनी ने कभी भी रोहन की शिकायत पापा से नहीं की और ना मेरी बात किसी को बताई। एक दिन रोहन छत पर बॉल से खेल रहा था कि अचानक उसकी बॉल सड़क पर जा गिरी उसने दामिनी से बॉल लाने को कहा। दामिनी की तबीयत सही नहीं थी उसने मना कर दिया। रोहन रोते-रोते मेरे पास आया। मैने तुरंत दामिनी को डांट लगायी। दामिनी फिर भी नहीं मानी। मैंने उसे एक चांटा मारा तो बड़े अनमने मन से नीचे गई। पर वहां पर सड़क पानी से भरी हुई थी और अंदर एक लाइव बिजली

का तार था। दामिनी का पैर उस पर पड़ गया और थोड़ी देर में वह चीख के साथ नीचे गिर गई। मैं दौड़कर नीचे गई। उसे लोगों की मदद से तार से अलग किया पर उसका निर्जीव शरीर मेरी बाहों में था। हॉस्पिटल में उसे मृत घोषित कर दिया गया। मेरी आँखों में आंसू बह रहे थे। क्यों मैंने उसे ऐसा करने के लिए कहा। क्यों मैंने उस पर ध्यान नहीं दिया। मेरी पूरी आत्मग्लानि आँसू में बह कर निकल रही थी। रोते-रोते उसे शमशान गृह में सुपुर्द कर दिया गया। कई दिन उसकी यादों में खोई रही खुद को कोसती रही। पर दामिनी वापस कहाँ से आएगी। काश कि मैं सब कुछ ठीक कर सकती। एक दिन मैं उसके कमरे में गयी वहां उसकी पेंटिंग्स देखी सब में हम चारों ही दिखाई दिए हँसते खेलते। फिर अचानक मुझे उसकी डायरी जैसी नोटबुक दिखी। उसमे उसने मेरे बारे में सब अच्छा ही लिखा था, कुछ भी ऐसा नहीं लिखा था कि माँ ने आज डांटा या रोहन को ज्यादा प्यार दिया या मेरी तरफ कोई ध्यान नहीं दिया। मेरी आँखों से अविरल आंसू बह रहे थे। इतनी तारीफ और मैं इतनी कमजोर थी कि बेटी का दर्द नहीं समझ सकी। मैं ग्लानि से भर उठी और मैंने इसे सुधारने का प्रण किया।

और मैं उसकी आत्मा की शांति के लिए अग्रसर हो गई। मैं केवल ग्रेजुएट थी और अनुभव भी नहीं था। राहुल की नौकरी से जैसे-तैसे काम चल रहा था। पर मैं सिलाई में निपुण थी। मैंने अपनी सिलाई मशीन निकाली और थोड़े से पेपर में फ्लायर्स वितरित किए जिसमें मैंने सिलाई का काम और सिलाई सीखने के काम का विवरण दिया। थोड़े समय के बाद काम आने लगा। धीरे-धीरे मैंने चार सिलाई मशीन कर ली। और काम बढ़ा और फिर एक जगह किराये पर ले ली। शायद ऊपर से दामिनी मेरी मदद कर रही थी। बाद में मैंने एक छोटी फैक्ट्री खरीद ली जो बंद पड़ी थी, उसकी मरम्मत करा कर उसे सही किया, आधुनिक उपकरण लगाए और मेरा काम काफी बड़ा हो गया। राहुल भी मेरे साथ लग गए। मेरा टर्नओवर लगभग 500 करोड़ का हो गया। बाद में रिलायंस के साथ भी जुड़ गयी, आदित्य बिरला ग्रुप के साथ भी मैं जुड़ गयी। इसके पश्चात मैंने मुंबई के पास पनवेल के पास 10 एकड़ जमीन ली और दामिन गृह का जन्म हुआ। आज यहाँ लगभग 500 महिलाएं हैं व लगभग 1000 बालिकाएं हैं। स्कूल एवं सारी सुविधाएँ अंदर हैं। कई समाज सेवी संथाएं इसके साथ जुड़ी हुईं हैं एवं देश के कोने-कोने से यहाँ पर महिलाएं एवं बालिकाएं आती है। इस गृह से कई इंजीनियर एवं डॉक्टर निकले हैं। सब किसी न किसी रूप में फिर इस गृह से जुड़ जाते हैं। सब मुझे माँ कहती हैं और मैं हमेशा इन्हें देख कर दामिनी को याद करती हूँ। दामिनी हमेशा मेरे साथ है और मैं मानती हूँ की ऊपर से वह बहुत प्रसन्न हो रही होगी और मुझे माँ कह कर पुकार रही होगी।

कोविद रंजन
पीजीपीबीएम

उड़ान

आज फिर बच्चे अबीर को घेर कर उस पर हँस रहे थे। सृष्टि की तो हँसी रुक ही नहीं रही थी। "क्या हुआ, क्यों तंग कर रहे हो अबीर को?" दीपा ने उन्हें हल्के से डाँटते हुए कहा। "मैम देखो न, अबीर ने मैंगो में ब्लू कलर कर दिया।" सवा चार बरस की सृष्टि ने मुँह पर हाथ रखकर हँसते हुए कहा। "यह कितना बुद्धू है न।" "ऐसे नहीं कहते, बुरी बात।" दीपा ने सृष्टि को समझाया।" "पर मैम मैंगो तो पीला होता है न।" आकाश बोला। "पीला नहीं ,ग्रीन होता है।" आदिल बोला। "मेरी मम्मी कहती हैं कि मैंगो ऑरेंज होता है" कनु बोली। "ठीक है भई, आप सब ठीक कह रहे हो, अब सब चलकर अपना अपना काम करो।" दीपा बोली।

दीपा प्राइमरी विद्यालय में प्रेप कक्षा की क्लास टीचर है। सारा दिन बच्चों में उलझी रहती है। छोटे बच्चों को पढ़ाना -सिखाना बहुत ही मुश्किल काम है। बच्चे, जिनके भोले प्रश्न खत्म होने में ही नहीं आते। दीपा अबीर के पास आकर खड़ी हो गई। अबीर की हर बात अलग है। वह बड़ी तल्लीनता से होंठ पर होंठ चढ़ाए, ड्राइंग शीट पर करीब- करीब पूरा झुका, एक बादल में लाल रंग भर रहा था। नीचे काले तने और एक पीली पत्तियों वाले पेड़ पर, दो नीले आम लटक रहे थे। दीपा को हँसी आ गई। "अबीर बादल तो नीला होता है न बेटे। तुमने तो उसे लाल बना दिया। क्यों?"अबीर ने अपना मुँह और आँखें फैला कर उसकी ओर देखा और हाथ की रंगीन पेंसिल ,जोर से डेस्क पर फेंक दी। उस पेंसिल के साथ और चार पेंसिलें जमीन पर आ गिरीं। वह बोला "मैम क्लाउड को गुस्सा आ रहा है न। इसलिये वो लाल हो गया है। "पर इसे गुस्सा क्यों आ रहा है?" "अरे मैम! उसकी मम्मा ने उसे खेलने जाने नहीं दिया। इसलिए तो वह गुस्सा है। और क्या?" "पर आप को गुस्सा क्यों आ रहा है?" दीपा ने उसका सिर सहलाते हुए पूछा। "क्लाउड मेरा बेस्ट फ्रेंड है न!" वह बोला। "ओह यह बात" कहकर वह दूसरे बच्चों का काम देखने आगे बढ़ गई। दीपा को अबीर में कहीं अपना बचपन नजर आता था। वह भी ऐसी ही थी। उसका भी हर बात में अपना नजरिया था। बचपन में एक बार "कौआ उड़ , तितली उड़, तोता उड़" खेल रही थी। बड़का भैया बोला, "दीपा उड़।" और दीपा ने उंगली ऊपर उठाई "उड़", । बड़का बोला "दीपा आउट। दीपा तो नहीं उड़ सकती।" "मैं उड़ सकती हूँ, उड़ सकती हूँ। और उसने दोनों हाथ ऊपर उठा उचकना और भागना शुरू कर दिया। सब हँसने लगे। दीपा को बुरा लगा। वह गुस्से में जमीन पर पसर गई और रोना शुरू कर किया। चुप हुई तब, जब सबने मान लिया कि दीपा उड़ सकती है। आज दीपा को अपने इस हठ पर हँसी भी आती है और मन कहीं कचोट भी उठता है। वह पढ़ाई में बहुत अच्छी थी। खूब पढ़ना चाहती थी। पर पाँच बच्चों और तीन पीढ़ियों वाला, निम्न मध्य वर्गीय संयुक्त परिवार , उसकी उड़ान को पंख नहीं दे पाया। जैसे तैसे इंटर तक पढ़ पाई और बाद में उसका विवाह हो गया। वो तो उसकी किस्मत अच्छी रही कि उसके पति ने उसे ग्रेजुएशन करवाया और नर्सरी टीचर ट्रेनिंग कर वह यहाँ नौकरी करने लगी। उसकी उड़ान यहीं तक सिमट गई।

वह अतीत में खोई थी कि सृष्टि और अबीर के झगड़े से उसका ध्यान क्लास में लौटा। "अब क्या हो रहा है वहाँ?" उसने पूछा। " मैम !अबीर ने सृष्टि की ड्राइंग खराब कर दी।" आदिल बोला। दीपा ने देखा सृष्टि की पूरी शीट पर अबीर ने उलटी -सीधी लाइनें, घुचड़ मुचड़ स्टाइल में लगा दी थीं। "अबीर तुमने ऐसा क्यों किया ?" उसने उसे डाँटा। "इसने मेरे रोज़ को गंदा क्यों बोला?" "कितना गंदा है इसका रोज़" सृष्टि रोती सी बोली। दीपा ने देखा अबीर ने गुलाब बनाया था जिसमें उसने गुलाब में ब्राउन और पत्तियों में सलेटी

रंग भरा था। सृष्टि सोच रही थी, मैम अबीर की शीट पर क्रॉस कर देंगीं। पर दीपा बोली "सबकी ड्राइंग बहुत अच्छी है।" उसने सभी बच्चों की शीट पर स्टार और स्माइली बनाई। सृष्टि रोनी सूरत बनाए खड़ी थी। "इधर आओ सृष्टि, मुझे दिखाओ तो , तुमने क्या बनाया है।" दीपा बोली। रुआंसी सृष्टि ने अपनी घुचड़- मुचड़ शीट उसकी ओर बढ़ाई। "अरे वाह, तुम्हारा गुलाब तो बहुत अच्छा बना है सृष्टि। पिंक पिंक "वह बोली। पर सृष्टि खुश नहीं हुई। तभी अबीर आगे आ गया, "सृष्टि! तुम मेरी शीट ले ले। मैंने तेरा गुलाब खराब किया न इसलिए।" उसने सृष्टि की ओर अपनी शीट बढ़ाई। दीपा और सभी बच्चों ने तालियाँ बजाईं। सृष्टि ने अबीर की शीट ली, उस पर पेंसिल से घुचड़-मुचड़ किया और हँस पड़ी। अबीर भी हँस पड़ा। बच्चों की उड़ान पंख फैला रही थी।

वीणा गुप्ता
परिवार सदस्य, मनन गुप्ता, ईडीपीएम

चेन्नई: अजनबी शहर और यादगार पल

आज सुबह नींद एक अजीब शोर से खुल गई। एक अनजान सा शोर। आवाज कानों तक आ तो रही थी, लेकिन कुछ समझ नहीं आ रहा था। चारों ओर देखा तो याद आया कि बस की यात्रा समाप्त हो चुकी है और अब मुझे उतरना था। 40 घंटे की ट्रेन की थकान और 6 घंटे की बस यात्रा से एक आम इंसान का शरीर तो कब का जवाब दे चुका होता है, लेकिन इसका असर मुझ पर हो ही नहीं सकता था। 40 महीनों में जितना कुछ देखा था, उसके सामने ये 40 घंटे तो स्वर्ग का रास्ता था। सुबह हो चुकी थी, लेकिन अंधेरा अब भी पूरी तरह से छंटा नहीं था। दोनों हाथों में कमर से लटकते हुए और सपनों के बोझ से थोड़े हल्के ट्रॉली बैग्स, और कंधे पर जिम्मेदारियों के अलावा 2 बैग—एक आगे और एक पीछे—और गले में एक हेडफोन था। अभी लडखड़ाते हुए मैं बस से उतर रहा था कि डॉक्टर भैया कुछ बोलते हुए सामान उतारने में मदद करने लगे। न चेयर देखकर चारों ओर देखा तो एक अनजान शहर का अनुभव स्वाभाविक था। यहाँ की खुशबू, हवाएँ, शोर सब नया सा था।

इतने में मुझे याद आया कि मुझे कॉलेज पहुँचना है। और याद आया कि ऑटो लेनी पड़ेगी। और याद आया कि ऑटो वाले कहाँ हैं। जब मैं पिछली जनवरी में चेन्नई आया था। जनवरी के आखिरी दिनों में ठंड बहुत पड़ रही थी। कैट के रिजल्ट आ चुके थे और कुछ कॉलेजों के इंटरव्यू शुरू हो गए थे। तब खबर आई कि एक करीबी की तबियत अचानक बिगड़ गई है और लगातार इलाज के बाद असर न होने पर उन्हें चेन्नई के अपोलो अस्पताल लाया गया। कुछ दिनों में मुझे भी चेन्नई आना पड़ा क्योंकि तबियत में खास सुधार नहीं हो रहा था। उस बार चेन्नई पहली बार आया था। एयरपोर्ट से कैब से अस्पताल पहुँचते-पहुँचते आधी रात हो गई थी। अस्पताल पहुँचकर दोस्त से मिलना, हाल-चाल लेना और फिर पता चला कि रात में अस्पताल में रुकना मुश्किल था क्योंकि एक मरीज पर एक अटेंडेंट ही प्राप्त था। वैसे मैंने पहले से ही एक होटल बुक कर रखा था जो अस्पताल के पास था। मैं अस्पताल से बाहर आकर ऑनलाइन कैब बुक करने लगा। आधे घंटे तक कोई कैब नहीं मिली, फिर सोचा पैदल चलकर जाऊँ क्योंकि मैप पर दूरी केवल 400 मीटर दिखा रहा था। होटल वाले को मैंने कॉल कर दिया था कि मैं अभी अस्पताल से निकल रहा हूँ और थोड़ी देर से पहुँचूंगा। क्योंकि मुझे कैब या ऑटो मिलना मुश्किल लग रहा था। अभी कुछ दूर आगे बढ़ा था कि एक ऑटो ने आकर पूछा, "सर, होटल चाहिए क्या आपको?" मैंने अनसुना करके आगे बढ़ गया और चलता रहा। फिर थोड़ी देर बाद एक और ऑटो मेरे सामने आकर रुका, और इस बार उसमें सवार 2 लोग थे। ऑटो वही था बस एक व्यक्ति नया था उसमें। फिर उन्होंने वही सवाल दोहराया। मैं घबराया था। फिर इस बार मैंने थोड़ी सख्त आवाज में कहा, "नहीं, मैंने ऑनलाइन बुक कर रखा है," और मैं ट्रॉली के साथ आगे बढ़ने लगा। कई अंतरगत मैं सोच रख था कि कैसे बचना है ऐसे में। लेकिन समझ नहीं पा रहा था कि पहले कुछ होने का इंतजार करूँ या पहले ही अपने बचाव में कोई कदम उठाऊँ। इतने में ड्राइवर आगे आकर अपना इरादा दिखाते हुए बोला कि मैं आपके होटल से आया हूँ, उन्होंने आपको लाने के लिए भेजा है। तब थोड़ी राहत मिली।

इस घटना को आज भी अपने दोस्तों के साथ साझा करके हँस लेते हैं कि कितनी अजीब बात थी। मैं सोच रहा था और क्या हो गया। इस बार जून में फिर से चेन्नई आया था एडमिशन के लिए। ऑटो वालों की आवाज सुनते ही वह यादें ताजा हो गईं। अंधेरा इस बार भी था लेकिन भोर का। बस डर नहीं था कि कोई घटना न हो जाए, अजनबी शहर में अजनबी ऑटो की वजह से।

कुमार मंगलम
पीजीपीएम, 2024-2026

मुस्कुराती हुई लड़की

यह मेरी किशोरावस्था के दौरान हुआ था और यह एक सच्ची घटना पर आधारित है।

7 संस्कार हैं, और ऐसा ही एक महत्वपूर्ण अनुष्ठान है पुष्टिकरण, जो विश्वास और पवित्रता की वकालत करता है। इसलिए, बाइबिल की कक्षा में भाग लेना और विश्वास में बने रहने के लिए खुद को तैयार करना अनिवार्य था। मैं आलसी था और कक्षा में भाग लेने के लिए बहुत अनिच्छुक था। एक क्रोधित चेहरे के साथ, मैं अपनी कक्षा में चला गया। मैं किसी को नहीं जानता था, इसलिए मुझे अकेलापन महसूस हुआ। एक लड़की आई और मेरे बगल में बैठ गई। वह गोरी और सुंदर थी। उसने मेरे चेहरे को देखा और फिर धीरे से मेरे कंधों को थपथपाया और मुस्कुराई। मेरे विचार बदलने लगे, मैं उसके और नए परिवेश के साथ सहज महसूस करने लगा। मैं उसके साथ बातचीत करना चाहता था, और तभी मुझे एहसास हुआ कि वह मेरे सभी संदेशों का जवाब सिर हिलाकर और मुस्कुराकर दे रही थी। मैं समझ नहीं पाया। फिर, सांकेतिक भाषा के साथ, उसने मुझे बताया कि वह गूंगी है। मेरा दिल टूट गया, और मुझे समझ में आया कि उसने अपनी उदासी के आवरण को एक खूबसूरत मुस्कान से ढक लिया है।

हम अच्छे दोस्त बन गए। एक महीने की कक्षा के बाद, बड़ा दिन आ गया। ड्रेस कोड नीला था, इसलिए मैंने सफ़ेद पत्थरों से जड़ा हुआ एक नया नीला सलवार पहना। मुझे अपनी ड्रेस पर बहुत गर्व था; उसने एक फीका नीला सलवार पहना था। जब मैंने उससे इसके बारे में पूछा, तो उसने मुझे सांकेतिक भाषा में बताया कि वह अपने पिता से ड्रेस पर पैसे नहीं ले सकती। मुझे बहुत बुरा लगा क्योंकि 'मैं किसी भी तरह से उसकी मदद नहीं कर सकती थी।' मेरे मन में मिश्रित भावनाएँ थीं, मैं प्रार्थना में शामिल होती रही। जब पादरी ने यूचरिस्ट (पवित्र आत्मा की शक्ति के माध्यम से रोटी और शराब यीशु मसीह का शरीर और रक्त बन जाता है) उठाया, तो कहीं से एक कबूतर प्रकट हुआ और तीन बार यूचरिस्ट के चारों ओर उड़ गया। हर कोई अवाक था, और मेरे रोंगटे खड़े हो गए।

क्योंकि बाइबल कहती है अध्याय मैथ्यू बनाम 3:16,17 "जैसे ही यीशु ने बपतिस्मा लिया, वह पानी से बाहर निकल आया। उसी क्षण, स्वर्ग खुल गया, और उसने परमेश्वर की आत्मा को कबूतर की तरह उड़ते और उस पर उतरते देखा। और स्वर्ग से एक आवाज़ आई, "यह मेरा बेटा है, जिसे मैं प्यार करता हूँ; मैं उससे बहुत प्रसन्न हूँ"

उस पल, मैंने उसके चेहरे को देखा। वह चमक से चमक रही थी, और यह उसके पूरे चेहरे से निकल रहा था। वाकई, यह एक दिव्य क्षण था।

इस घटना ने मुझे सिखाया कि भगवान आपकी भौतिक संपत्ति, आर्थिक स्थिति या पहनावे को नहीं देखता है। वह केवल आपके दिल को देखता है। क्या आप सहमत हैं?

डॉ. एलिज़ाबेथ वर्षा पॉल
परिवार सदस्य, प्रो. सुरेश पॉल एंथनी

प्रकृति

जून की भीषण गर्मी का समय, दिन के तकरीबन 2 बजे हैं। तेज धूप की वजह से हवाएँ भी गर्म हो उठी हैं। पूरा गाँव शांत मालूम पड़ता है। धूप की वजह से सब अपने घर में ही बैठे हैं। एक मोहन ही है जो अपने घर पर भी चैन से नहीं है। गर्मी की इस उहापोह में भी वह अपने गहन विचारों में खोया है। जीवन की निराशा ने उसे ऐसा घेर रखा है कि उसे कुछ भी रास नहीं आ रहा। न किसी से बात करना, न किसी से कुछ सुनना। दिन भर इसी उधेड़बुन में खोया रहता है कि आखिर क्यों एक-एक कर सब उसे अकेला छोड़कर चले गए। महज 4 वर्ष की आयु में ही सिर से पिता का साया उठ गया था। विरासत के रूप में कुछ हाथ भी लगी तो वह थी, दो बहनों तथा एक विधवा माँ की ज़िम्मेदारी। इन ज़िम्मेदारियों के बोझ तले मोहन का बचपन ऐसा कुचल दिया गया कि वह केवल 7-8 वर्ष की आयु से ही एक चाय की दुकान पर काम करने लगा। मोहन ने यथाशक्ति काफी संघर्ष किया। गाँव के ही सरकारी स्कूल में अपना दाखिला करवाया। वह स्कूल से पहले भी चाय की दुकान पर काम करने लगा तथा स्कूल से लौटने के पश्चात भी। इतने संघर्षों के बावजूद जो कुछ भी उसने अर्जित किया, वह दोनों बहनों की शादी में दहेज में चला गया। घर में केवल माता जी बची थीं। वह भी वृद्धावस्था की वजह से बीते वर्ष मोहन को उसकी जिंदगी में अकेला छोड़ सदा के लिए चली गईं। मोहन अपने जीवन में निरा अकेला और निराश हो गया था। दिन भर यही सवाल उसे घेरे रहता कि आखिर उसके साथ ऐसा क्यों हुआ? उसने तो हर द्विविधा का डटकर सामना किया, पर इस अकेलेपन से निजात पाने की शक्ति बाकी नहीं रह गई थी उसमें। इन्हीं खयालों में वह बार-बार करवटें बदलते हुए बिस्तर पर ही पड़ा था। जब वहाँ भी चैन नहीं मिला तो उठकर मरुस्थल बाँध लिया और पगडंडियों पर होते हुए अपने खेत की तरफ चल पड़ा। वहाँ जाकर वह अपने खेत में लगे, पत्तों से भरे एक आम के पेड़ के नीचे बैठ गया। वहाँ थोड़ी ठंडी हवा की आहट थी। मोहन अब भी अपनी चिंता में ही लीन था।

कुछ देर बीता, आम के पेड़ की एक पतली टहनी हवा से टूटकर मोहन के सामने आ गिरी। मोहन ने नज़रें ऊपर उठाई तो देखा कि पेड़ हवा में मस्त होकर झूम रहा था। यह देखकर मोहन आश्चर्य से भर जाता है और फ़ौरन पेड़ के पास बैठता है।

मोहन: (जोर से आह भरते हुए) आप यह कैसे करते हैं, मेरे दोस्त? जो एक समय अपना था, उसे आप कैसे जाने देते हैं?

पेड़: (अपनी पत्तियों को धीरे से झुलाते हुए) हम पौधों में हमारे अपनों की एक अलग अवधारणा होती है। हम बढ़ते हैं, हम खिलते हैं, हम मुरझाते हैं, और हम बिना किसी प्रतिरोध के अपने प्रिय को जाने देते हैं। यही नियति है।

मोहन: (पौधे को देखता है, उत्सुकता से) लेकिन क्या बदलावों को स्वीकार करना, जिसे आप कभी प्रिय मानते थे, उसे छोड़ना कठिन नहीं है?

पेड़: (धीरे से झुलाते हुए) जीवन में कुछ भी शाश्वत नहीं है। कोई कितना ही प्यारा हो, हमेशा साथ नहीं रहता। जीवन में कोई छूटता है, तो कई आते भी हैं। हम नई वृद्धि के लिए जगह बनाने के लिए अपनी पुरानी पत्तियों को त्याग देते हैं। जाने देने में हम, जो आने वाला है उसके लिए जगह बनाते हैं। यही प्रकृति है।

मोहन: (सोच-समझकर सिर झुकाते हुए) लेकिन क्या होगा अगर जो आने वाला है वह अनिश्चित, अज्ञात लगे?

पेड़: (बुद्धिमानी से) अनिश्चितता वही मिट्टी है, जहाँ से नई शुरुआत होती है। अज्ञात को गले लगाओ, क्योंकि इसके भीतर अनंत संभावनाएँ छिपी हैं।

मोहन: (पौधे के शब्दों पर विचार करते हुए) मैंने अपने अतीत को कसकर बंद मुट्ठी की तरह पकड़ रखा है, खुद को खोने के डर से इसे छोड़ने से डर रहा हूँ।

पेड़: (धीरे से) कभी-कभी, खुद को खोजने के लिए, आपको सबसे पहले यह छोड़ना होगा कि आप एक बार कौन थे। जैसे मैं नए का स्वागत करने के लिए अपनी पत्तियाँ गिराता हूँ, आप भी एक उज्जवल कल का स्वागत करने के लिए आज, इस अतीत के बोझ से बाहर निकल सकते हैं। तभी जीवन में आगे बढ़ पाएंगे।

मोहन: (मुस्कुराते हुए, उसकी आँखों में आशा की चमक) धन्यवाद, दोस्त। आपकी बुद्धिमत्ता ने मुझे बदलावों को अपनाने और जो अब मेरे लिए उपयोगी नहीं है, उसे छोड़ने का साहस दिया है। दिली आभार।

अंकेश मिश्रा
परिवार सदस्य, सौगंधिका मोहापात्रा, पीजीपीएम

सबक

दिलीप नाम का एक बारह साल का लड़का था, जो कक्षा 6 में पढ़ता था। दिलीप एक अच्छे और दयालु स्वभाव का बच्चा था, जो हमेशा दूसरों की परवाह करता था। हालांकि उसकी पढ़ाई औसत थी, लेकिन उसके व्यवहार और शिष्टता की सभी सराहना करते थे।

हाल ही में, दिलीप ने कुछ बुरे लड़कों से दोस्ती कर ली थी और उनके साथ घूमने-फिरने लगा था। इन लड़कों की संगति में दिलीप ने गालियाँ देना सीख लिया था। उसे लगता था कि गालियाँ देने से वह बड़ा और समझदार लगने लगेगा।

एक दिन, दिलीप अपने घर पर था और घरेलू सहायिका मालथी घर के फर्श को साफ कर रही थी। दिलीप ने अनजाने में अपने गंदे पैर साफ फर्श पर रख दिए। मालथी, जो हमेशा दिलीप के प्रति स्नेही और सहायक रही थी, को यह पसंद नहीं आया और उसने दिलीप को ऐसा न करने की चेतावनी दी। दिलीप ने गुस्से में आकर आदत से मजबूर होकर मालथी को गालियाँ दे डालीं।

मालथी दंग रह गई। दिलीप हमेशा विनम्र और अच्छे स्वभाव का था। उसने कभी किसी का अपमान नहीं किया था। मालथी यह सुनकर चौंक गई और उसने दिलीप की माँ को इस घटना के बारे में बता दिया।

दिलीप की माँ को भी पहले तो बहुत आश्चर्य हुआ। उसने सोचा कि दिलीप को एक सबक सिखाना पड़ेगा। उसने दिलीप से बात न करने का निर्णय लिया। पहले तो दिलीप को इसका कोई फर्क नहीं पड़ा, लेकिन जब एक-दो दिन बीत गए और उसकी माँ ने उससे बात करना बंद कर दिया, तो दिलीप ने महसूस किया कि कुछ गलत हो रहा है।

वह अपनी माँ से पूछता है कि क्यों वह उससे बात नहीं कर रही हैं, लेकिन उसकी माँ चुप रही। दिलीप ने लंबे समय तक सोचने के बाद अंततः समझ लिया कि उसके व्यवहार में कुछ गलत था।

वह अपनी माँ के पास गया और उसने अपनी गलती स्वीकार की। उसने माँ से कहा कि वह अपनी हरकत पर बहुत दुखी है और भविष्य में कभी भी गालियाँ नहीं देगा।

इसके बाद, उसकी माँ ने उसे घरेलू सहायिका, मालथी, से माफी मांगने को कहा। दिलीप ने मालथी से सच्चे दिल से माफी मांगी। मालथी ने दिलीप की माफी को स्वीकार कर लिया और उसे क्षमा कर दिया।

दिलीप ने इस घटना से एक महत्वपूर्ण सबक सीखा कि किसी को भी गालियाँ देना या अपमानित करना गलत है और उसे जीवन में कभी भी ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए।

सुहास एम अवबुत
संकाय सदस्य, भारतीय प्रबन्धन संस्थान, तिरुचिरापल्ली

गुरु के प्रति श्रद्धापूर्ण उद्गार

अँधेरे में रोशनी, ढूँढ रही थी जमाने से।
छूकर तूने खुद मुझे, सूरज बना दिया ॥

था जमाने से यहाँ, तम व रज का ही निवास।
इस अँधेरी कोठरी को, रोशन बना दिया ॥

मेरी आँखों से जो देखी, कुछ नहीं आया नजर।
तेरी आँखों ने मुझे, जलवा दिखा दिया ॥

मैं रही उलझी हुई, कोरे किताबों में यहाँ।
इक इशारे में ही तू, सब कुछ जना दिया।

मैं पड़ी अज्ञान में थी, परिग्रह के जाल में।
पतझड़ से तूने दूर कर, बहारों में ला दिया ॥

मैं रही थी सींचती, मन जो पापी भ्रमित था।
मोह लालच से सने, मन को सुखा दिया ॥

खुद से गाफिल दौड़ती थी, सुन के मैं मन की पुकार ।
इस भटकते मन को तू, राहों पे ला दिया ॥

कुछ लुटेरों ने बनाया, आशियाना मुझमें ही।
उनसे बचा के तू मुझे, पथ पे लगा दिया ॥

डूबती ही जा रही थी, अपने ही जंजाल में ।
जिंदगी थी इक भँवर, तूने बचा लिया ॥

मेरी सूरत से ही मैं, अंजान थी अब तक यहाँ ।
मेरे बिखरे लट को तूने, खुद सजा दिया ॥

मैं पड़ी थी मूल पर, तूने उठाया स्नेह से ।
फर्श पर से अर्श पर, मुझको बिठा दिया ॥

जब तलक मैं दूर थी, कड़वे ही फल चखती रही ।
जब मैं आयी पास तो, तूने सुधा दिया ॥

मेरे अंतर्तम का खालीपन, न कोई भर सका ।
एक तेरे सानिध्य ने, अनुभव घना दिया ॥

जिंदगी वीरान थी, खोई थी गुमसुम मैं कभी ।
ये खिली कैसी बहार, जो तूने गुनगुना दिया ॥

डॉ. पवन कुमार सिंह
निदेशक, भारतीय प्रबन्धन संस्थान, तिरुचिरापल्ली

गणतंत्र का अमतृ संदेश

है गणतंत्र दिवस आओ मिलकर तिरंगा फहराएं।
भारत- वैभव का गुणगान हम सब मिलकर गाएं ॥
गणतंत्र, जिसके लिए शहीदों ने किया बेड़ियों का सामना।
एक हो भारत, श्रेष्ठ हो भारत यही है संकल्प अपना ॥
भारत, जो है आकाश सा बलवान और धरती सा धैर्यवान।
जिसके सिद्ध, योग और आयुर्वेद में हर रोग का निदान ॥
याद है वो प्रतिज्ञा जो हमने की थी रावी के तट पर।
नहीं भूलेंगे हम चलना सत्य और अहिसां के पथ पर ॥
वीर भारतीयों की कहानी अमृत महोत्सव में हम कर रहे याद।
योग आध्यात्म और तकनीकी से करें कुशल संवाद ॥
राष्ट्र निर्माण की राह पर हम सदैव बढ़ते रहें।
गणतंत्र की मिठास हमारे दिल में बसी रहे ॥
हो हृदय में सम्मान, मशक्कत का उन किसानों की।
ना भूलें हम शहादत को उन वीर जवानों की ॥
जिसके खून पसीने की रोटी है हमने खाई।
और जिन्होंने पीठ नहीं दिखाई सीने पर गोली खाई ॥
संघर्ष के मैदान पर गढ़ी गई कहानियां अनगिनत।
इस विरासत और संस्कृति का हमें अभिमान है अनवरत ॥

अनिकेत सचान
शोधार्थी, डीपीएम

पिता

यह 'पिता' शब्द कुछ खास है,
इसमें भावनाओं की एक अलग ही मिठास है।

जो बच्चों की नयी पेन्सिल के लिए
भरी बारिश में, दूर तक चला जाता है
जो गुड़िया खिलौने ला लाकर, ख़ुशी से,
अपनी जेबें खाली करवाता है
जो बच्चों की पसंद नापसंद के कारण
बाज़ार के दसियों चक्कर लगाता है
और, दिन भर के संघर्ष के बाद भी
घर खाली हाथ नही आता है
जो हर रात एक अतिरिक्त घंटा
आने वाले खर्चों की गणित में बिताता है,
किंतु फिर भी अपनी आमदनी
अपने बच्चो से छिपता है। वो हैं पिता

यह 'पिता' शब्द कुछ खास है,
इसमें भावनाओ की एक अलग ही मिठास है।

जो अपनी भावनाओ को आँसुओं से नहीं
बस एक सौम्य मुस्कान से दिखाता है
जो अपनी आँखों के पानी का कारण
हमेशा धूल का एक कण बताता है
जो खराब तबीयत को छुपाने के लिए
अक्सर फोन पे नहीं आता है
और अपनी भर्रायी हुई आवाज़ को
कई बार खाँसी में छुपाता है
जो हर त्योहार पर चुपचाप आँसू बहाता है

किंतु फिर भी सामने पड़ने पर
पहले माँ को चुप कराता है। वो हैं पिता

यह 'पिता' शब्द कुछ खास है,
इसमें भावनाओ की एक अलग ही मिठास है।

जो अपनी इच्छाओं को त्याग कर
पूर्ण निस्वार्थ भाव से,
परिवार का दायित्व उठाता है
जो संतान के सुनहरे भविष्य के लिए
अपना सारा जीवन बिताता है
जो आवश्यकता पड़ने पर
इस समाज से भी लड़ जाता है,
और प्रत्येक विषम परिस्थिति में
चट्टान जैसे डट जाता है। वो हैं पिता

यह 'पिता' शब्द कुछ खास है,
इसमें भावनाओ की एक अलग ही मिठास है।

जो अपनी बेटियों को भी
बेटों जैसा बनाता है,
जो उन्हें इस समाज की
विषमताओं से अवगत कराता है,
जो उनको अपना जीवन
सर उठा के जीना सिखाता है,
किंतु उनकी असुरक्षा के भय से
रातों को सो नही पाता है। वो हैं पिता

यह 'पिता' शब्द कुछ खास है,
इसमें भावनाओ की एक अलग ही मिठास है।

वैसे माँ तो अतुलनीय है,
उसका अद्भुत प्रेम तो
सुबह की चाय से लेकर
दाल-रोटी में अतिरिक्त घी
और सर पे तेल रखने जैसी
छोटी-2 चीज़ में दिख जाता है,
लेकिन पिता? पिता तो अपनी
बाह्य कठोरता में ही शोभनीय हैं,
उनका प्रेम तो बस,
कंधे पे एक हल्का सा हाथ
या सोते में चश्मा निकालकर,
रख देने भर से ही झलक जाता है

इसीलिए! यह 'पिता' शब्द बहुत ही खास है,
इसमें भावनाओ की एक अलग ही मिठास है।

श्रीमती दिव्या द्विवेदी
परिवार सदस्य, प्रो. बिपिन कुमार दीक्षित

'माँ' नाम है एक रिश्ते का

ऐसा सब सोचते हैं
मैं भी सोचती थी बस अब से पहले तक।
अभी अभी हुआ मालूम कि
माँ तो नाम है
एक अहसास का जो हमारे पूरा होने का कराता है अहसास।
एक ममता में भीगी छुअन का
आँचल की सरसराहट का
आगोश की गर्माहट का
एक भीनी सी सुगंध का
लोरियों के छंद का।
कितना कुछ समेटे है एक शब्द अपने में
जैसे एक साँस समेटे रहती है जीवन के पूरे अर्थ को
हाँ, माँ है एक 'पूर्णत्व' का नाम

डॉ. नूतन कौशिक
परिवार सदस्य, दीपाक्षी शर्मा, पीजीपी

मेरा परिचय – मैं कौन

रुकती नहीं, ठहरती नहीं
रुकती नहीं मैं रोके किसी के
मुड़ती खोज मैं राह वहीं से
अड़ी, खड़ी जहां जिद्दी चट्टान
नारी बुलाए मुझे जहान

झुकती नहीं, हिलती नहीं
झुकती नहीं मैं झुकाए किसी के
सह जाती सभी प्रहार प्रकृति के
सुरक्षित रखती जो अपनी संतान
मजबूत मैं, वही शिला महान
नारी बुलाए मुझे जहान

तितली हूँ, खुशबू हूँ
रौनक हूँ मैं आँगन की
खुशियों के रंग भरती
जीवन हूँ मैं साजन की
पोषण देती नम्र झुकी जो
मैं वही, तरुलता महान
नारी बुलाए मुझे जहान

जलती हूँ, जलाती हूँ
तपिश मुझ में 'अग्नि' सी
संभलती हूँ, संभालती हूं
पालती सबको, मैं 'अवनी' सी
शीतलता स्वभाव मेरा
निर्मल हूं मैं 'पानी' सी
आंचल की देती सबको छाँह
मैं वही खुला आसमान
नारी बुलाए मुझे जहान
नारी बुलाए मुझे जहान

सुचेता गुप्ता
परिवार सदस्य, श्री नवीन कुमार गुप्ता

क्या पाया और क्या खोया?

व्यवसाय में तो हम जीत गए,
लेकिन जवानी के दिन तो बीत गए।
काम में पदोन्नति तो प्राप्त किया
पर जीवन का मनोरंजन समाप्त हुआ ॥

खाते में बहुत पैसे जमा किए,
लेकिन सच्चे दोस्तों को न कमा पाए।
शहर में घर-बार तो पा लिया
पर ताज़ी हवा को गंवा दिया ॥

तरह-तरह की गाड़िया खड़ा किये,
लेकिन अपनी सेहत को तो बलि चढ़ा दिये।
सूट और टाई पहनकर बैठक में भाग लिया
पर त्योहारों के मज़े को त्याग किया ॥

वातानुकूलित कमरे में आराम से सोने लगे,
लेकिन मन की शांति को तो धीरे-धीरे खोने लगे।
जंक फूड को खुशी से अपनाने लगे
पर अनजाने ही अपने जीवनकाल को घटाने लगे ॥

पूरी दुनिया घूम कर आए,
लेकिन अपने बच्चों को न मालूम कर पाए।
जीवन की चूहा-दौड़ में सफल बने
पर बच्चों की परवरिश में शायद विफल रहे ॥

हर पल को खुलकर जीना जान लो,
अपनी अंदर की क्षमता को पहचान लो।
वस्तुओं की लालच को इनकार करो
अपने दिल के सपनों को साकार करो ॥

महिता जीपी
परिवार सदस्य, प्रीथा जीपी, पीजीसीडीटी

अधूरी बातें

दर्द अब हल्का धुंधला सा महसूस होने लगा,
जैसे शायद वो कहीं गई ही न हो,
जैसे किसी दिन फिर से मुलाकात होगी,
और बातें वहीं से शुरू होंगी,
तुम डांटोगी, दुलारोगी, कभी चुभने वाले ताने भी दोगी,
फिर मैं तुम्हारे गले से लिपट जाऊँगी,
और अब तुम गुस्से और मुस्कान को एक साथ संभालने की कोशिश करोगी,
पर मुझे खुद से लिपटे रहने दोगी,
धीरे से तुम्हारी हथेली मेरे सर पे जाएगी और बोलोगी,
ले आओ कंघी, तुम्हारी बालों की गाँठों को ठीक करते हैं,
और फिर उस ममता, लाड़ और प्यार भरी छाँव में, तुम और मैं दुनिया भर की बातें करेंगे!!

अभी ये सोच ही रही थी, कि आँखों में नमी और अंदर घने काले बादल घुमड़ने लगे,
खुद को दर्द के उसी दरवाजे पे पाया, जहाँ तुम छोड़कर गई थी
पता चला कि तुम्हारे यहाँ न होने की कमी,
तुम्हारा यूँ अचानक और ऐसे जाना,
आज भी वैसे ही कचोटता है।
बस दर्द के आईने पे चलती हुई ज़िंदगी की धूल जम जाती है,
जहाँ ज़रा थम कर शीशा साफ़ किया, दर्द वहीं वैसे ही मिलता है,
जैसे अंदर अभी भी बहुत आँसू हैं तुम्हारे नाम के,
जो बर्फ़ की तरह जमें और पिघल नहीं पा रहे,
जो बहुत वेग से बाहर आना चाहते हैं, पर कहीं तो फँसे हैं।

क्या करूँ मैं इनका,
पर सोचा कुछ करना ही क्यों है,
यही तो हैं जो मुझे तुमसे जोड़े रखते हैं,
शायद इन्हीं से हमारी बातें होंगी,
जब भी मैं टूटूँ, तुम मुझे कहीं से दिलासा देना,
मेरी मन की शक्ति बनके या अमृता की कविता बनकर,
कहना कि हम फिर मिलेंगे, किस रूप में पता नहीं, पर हम फिर मिलेंगे।

शालिनी पार्थ
संकाय सदस्य, भारतीय प्रबन्धन संस्थान, तिरुचिरापल्ली

मज़हब

मज़हब की दीवारों पर शोणित खींची लकीरें हैं,
इंसानी चेहरों की जाने ये कैसी तस्वीरें हैं।
दीन धर्म बेमोल बिका है आज यहाँ बाज़ारों में,
कुर्बानी का मोल लग रहा सत्ता के गलियारों में।
जात पात का रावण जागा नेताओं के नारों में,
तिलिस्म बड़ा ये असरदार हैं सियासी अय्यारों में।
इसीलिए तो रोक पा रहीं सिंघों को जंजीरें हैं,
इंसानी चेहरों की जाने ये कैसी तस्वीरें हैं।
माँ का आँचल तार-तार कर, धरा बंटा शमशानो में,
टीके टोपी के बीच का अंतर जब जब ढूंढा इंसानो ने।
क्या है हिंदू और क्या मुस्लिम, जाति धर्म के खानो में,
जाने कैसे लोग बंट गयें उलटे सीधे पैमानों में।
भाई भाई के हाथ में देखो शत शोणित शमशीरें हैं,
इंसानी चेहरों की जाने ये कैसी तस्वीरें हैं।

आशीष सिन्हा
पीजीसीबीएए 05वी006

हिन्दी मेरी

देववाणी की तनया,
हमारी पहचान।
गौरव हमारा,
हमारा सम्मान,
हिन्दी मेरी।

अलंकार से सजी,
शोभा अमित लसी,
लय ताल अनुबंधित,
पहने छंद किंकणी।
हिन्दी मेरी।

रूप माधुर्य अपार,
अशेष शब्द आगार,
लक्षणा व्यंजना प्रहार,
मुहावरे की धार,
हिन्दी मेरी।

झरती सरस निर्झरी ,
हास उजास भरी,
रेशम पर ढुलकती,
मोती सी पदावली ,
हिन्दी मेरी।

पूजा सी पावन,
दीप शिखा सुहावन,
नव किरण सी दीपित,
छलकाती नवरस गागरी।
हिन्दी मेरी।

गोदी में इसके खेली,
वीरों की अप्रतिम शक्ति ,
निर्माल्य अपूर्व भक्ति,
वात्सल्य की मंदाकिनी।
हिन्दी मेरी।

हास परिहास मनुहार,
मधुर प्रणय उद्गार,
सुरम्य सुभग संसार,
चिर यौवना साकार ।
हिन्दी मेरी।

अनय का प्रतिकार ,
राष्ट्रीयता -संचार।
ओज भरी हुंकार
चेतना उजियार।
हिन्दी मेरी।

अक्षय संस्कृति कोष,
सत्य शिव उद् धोष,
नीति का कलगान,
देश का उत्थान।
हिन्दी मेरी।

वीणा गुप्ता
परिवार सदस्य, मनन गुप्ता, ईडीपीएम

इशारों इशारों में बातें हुई थी...

हम इस कदर खोये की आँखों में ही रातें हुई थी...
मन भर गया था या मंज़िल नयी बना ली
मुसाफ़िर ने क्यों हमसफ़र नयी बना ली
हम तो हर साँस में तेरी याद सजाये बैठे हैं...
तलब तेरी इस कदर लगी आँखों को ही तलब बनाये बैठे हैं...
बेवफ़ा ने वफ़ा से बेवफ़ाई की
यादों ने एक पल भी ना जुदाई की
ऐ ख़ुदा...
ये उल्फ़त में आज असर क्यों नहीं
मोहब्बत को आज मेरी कदर क्यों नहीं
कभी जान छिड़कती थी जो शख़्स मुहँ पर...
उस दिलदार को आज मेरी ख़बर क्यों नहीं...
विरह के सैलाब में हर रोज़ डूब रहे हैं हम...
ना शराब ने सहारा दिया
ना साहिल ने किनारा दिया
ना तुम लौट कर आये
ना प्यार हमने दोबारा किया
क्योंकि कहते हैं ना...
प्यार दोबारा थोड़ी होता है...
गर हो तो प्यार थोड़ी होता है...
अब हाल पूछते हो कोई ग़म तो नहीं
सब खैरियत है आँखें नम तो नहीं...
तो सुनो...
क्या खूब तुमने वादों को है निभाया
कोई कसर ही नहीं छोड़ी इस कदर है रुलाया...
मोहब्बत की नहीं धोखे की जंग मैंने है हारी...
जी लो अपनी फ़रेबी दुनिया, ज़रूरत नहीं मुझे तुम्हारी, ज़रूरत नहीं मुझे तुम्हारी!

आशुतोष कुमार
पीजीपीएम

यादें

यादों का साया,
आँखों के आगे फिर आया,
एक कतरा ग़म का, एक कतरा खुशी का
आँखों के एक कोने से रुकते-रुकते बाहर आया।

बीते लम्हों का फसफ़साला,
जज़्बातों का उमड़ता ज़लज़ला,
एक लम्हा खुशी का, एक लम्हा ग़म का,
गुज़रे वक़्त की राह पे हाथ थाम फिर ले चला।

यादें कुछ खट्टी-मीठी सी,
कुछ यादें कड़वी-तीखी सी,
एक घूँट ग़म का, एक चुस्की खुशी की,
ज़बान हो गई चटकदार, कभी हो गई फीकी सी।

कुछ भले फसलों से चेहरे,
कुछ फलक के पन्नों पे छपे से चेहरे,
एक चेहरा धुँधला सा, एक चेहरा पूरी तरह साफ़,
बैठा फसले में जगह बनाए, थोड़ा ऊपर थोड़ा गहरा।

दर्द में कुछ ग़ज़लें,
कुछ खूबसूरती से भरे नगमे,
एक गीत दर्द समेटे, एक गीत खुशी सहेजे,
बजता है बारी-बारी यही कहीं अंदर मन में...

अभिषेक सौरभ
पीजीपीएम

कसमें वादे

रेत में लिखे शब्दों की तरह,
बहते पानी में बूंद की तरह,
ख्वाबों के गम की तरह,
क्या कसमे वादे भुलाए जाते हैं भला?

दूरियों को मिटाते पुल की तरह,
दिलों को जोड़ते हुए उस नज़्म की तरह,
मोतियों से बने माला की तरह,
क्या उस भरोसे को भुलाया जाता है भला?

पहली बारिश की खुशबू की तरह,
चाँद की पहली चांदनी की तरह,
सितारों की चमक की तरह,
क्या दिल का रिश्ता खास नहीं होता है भला?

वादों की एहमियात समझे ज़रा,
मन की बातें बुझिए ज़रा,
निभाना है, बस यही याद रखिये ज़रा,
क्या अकेला फिर सतायेगा भला?

दोस्ती और प्यार का खेल है सारा,
समझा जो, वही सिकंदर बना।
संजोकर रिश्तों का वादा,
क्या रिश्ता मजबूत नहीं होगा भला?

तनुश्री मैती
पीजीसीबीएए 05, 23-24

आया हूँ

मंजिल से गुजरकर ना जाने किस रहगुजर आया हूँ।
दिल ने तो कभी इजाजत दी ही नहीं मगर आया हूँ।

मेरे दो वक्त की रोटी की कीमत बस मजदूरी ही नहीं,
माँ-बाप, दोस्त-यार, घर-बार ये सब छोड़कर आया हूँ।

उन्हें लगता है उनका कूचा मेरे घर के रस्ते में है,
कह दो उन्हें उन तक कर के मैं सफर आया हूँ।

दरिया समंदर खोजती है और चकोर चांद को,
मैं खोजता हूं सुकून सो उनके शहर आया हूं।

बार बार देखता हूं आइना के शायद मैं ये देख पाऊं,
के उनके नजरों से मैं उन्हें किस तरह नजर आया हूं।

खुदा मिलेगा आजमाए हुए लोगों के दुआवों में शायद,
ऐसे तो मैं मंदिर, मस्जिद, गिरजाघर होकर आया हूं।

इंज़मामुल होदा
पीजीपी, एचआर

ईश्वर और मैं

मेरा ईश्वर मुझे कुरेदता है
इंसान बने रहने के लिए,
पर मैं उतनी ही नास्तिक हूँ
जितना मेरा स्वार्थ।
मेरी आस्था मेरी इच्छा पूर्ति
के सीधे अनुपातिक है।
और मैं इतनी दिशाहीन
कि ख़ुद की आवाज़ पर
विचलित होकर पूछती हूँ
कौन है? कौन है?
ख़ुद से दूर होना
ईश्वर से दूर होना है।
मेरी ख़ुद से दूरी
सिर्फ़ एक आशा की दूरी है।
मेरा ईश्वर बस एक आशा-भर का है।

डॉ मेधा भट्ट
परिवार सदस्य, प्रो. वासवी भट्ट

वफादार पहरेदार (ड्रॉबी – मेरा कुत्ता)

वफादार साथी, दिल का टुकड़ा,
भौंकता, दौड़ता, प्यारा मुखड़ा।

कभी नखरे, कभी प्यार का तड़का,
साथी वफादार, पर स्वभाव का चटका।

बच्चे के साथ, खेलता कूदता,
हर मुश्किल में, साथ निभाता।

मेरे कदमों की, ध्वनि से जगता,
पूंछ हिलाता, दिल से लगता।

पैरों के पास, सोता है रात भर,
उसका साथ, मुझे देता है बल भर।

अपनी दुनिया, खुद ही बनाता,
फिर भी मेरे पास, लौट आता।

नहीं चाहता, हमेशा साथ रहना,
पर उसका प्यार, दिल में रखना।

तुम हो मेरे दोस्त, मेरा सहारा,
तुम्हारे बिना, लगता अधूरा।

चलो साथ-साथ, हर राह पर चलें,
हमारी दोस्ती, हमेशा कायम रहे।

कृष्णा तेजा पेरन्नागारी
संकाय सदस्य, भारतीय प्रबन्धन संस्थान, तिरुचिरापल्ली

करते ही नहीं

कोरा सा कागज़ है मन ये तुम्हारा, मगर कलम ढूँढते ही नहीं।
इंसान कहते ही तुम खुद को कभी, मगर खुलके जीते ही नहीं।
कभी कल बनने के लिए कुछ करते हो, मगर तुम वो हो ही नहीं।
सपने देखते हो बड़े-बड़े आँखों में, मगर कदम उठाते ही नहीं।

चाहते हो उसे बेपनाह हर पल, मगर कुछ कहते ही नहीं।
अपने अंदर ये अफ़साने समेटे, मगर बारिश कभी करते ही नहीं।
अनजान रातों में सिमट-सिमट के रो रहे हो, आँसू पोछते ही नहीं।
घर के अरमान पर एहसास चाहते हो, खुद के अरमान देखते ही नहीं।

मंदिर-मस्जिद में जा रहे हो, पर अपने अंदर ईश्वर ढूँढ़ते ही नहीं।
कागज़ और तुम दोनों जल रहे हो आग में, मगर कोई रोकते ही नहीं।

हेमंत कोठारी
पीजीपीएम, एचआर

ज़रूरी है, माँ

ज़रूरी है, माँ, ज़रूरी है,
मेरे खुद से दूर जाकर खुद से मिलना ज़रूरी है।
जाने कितने ख्वाब आँखों में बंधे हैं,
और अनजाने शहरों की तरह कितनी कहानियाँ बुननी हैं।
कभी शीशे की पेचिदगी, कभी ज़िंदगी की मजबूरी है।

ज़रूरी है, माँ, ज़रूरी है,
तेरे ख्वाबों में मेरी दुनिया है,
मगर यह दुनिया तू ही है, यह भी कहूँ अधूरी है।
मुझमें तेरे कल है और तुझमें मेरा आज,
कर देर रह खुद की बेमतलब की जंजीर से,
पहन ले अपनी सज़ा।

ज़रूरी है, माँ, ज़रूरी है,
तेरी खुशियाँ भी ज़रूरी हैं,
मन की तेरी खुशियाँ हम भी हैं, मगर यह भी सच है,
ज़रूरी है, खुद को पहचानना, खुद को समझना भी ज़रूरी है।
शायद इसमें तेरी अधूरी खुशियों की मंजूरी है।

ज़रूरी है, माँ, ज़रूरी है।

यश डाबी
पीजीपीएम

मैं गीत नये फ़िर लिखूँगा

मैं गीत नये फ़िर लिखूँगा,
मैं गीत हमेशा लिखता हूँ,
राष्ट्र के संविधान पर,
नारी के सम्मान पर,
मानवता खोये जाने पर,
ज़िंदगियों के नोचे जाने पर।

पर यह उपकार जो कर दो तुम,
मत किसी पर ऐसा ढोंग फेंको तुम,
तुम गंदी नज़रें मत दिखाओ,
तुम हीन भाव बाहर फेंको।

हर नारी है पवित्र पुनीता,
पावन जैसी गंगा-गीता।
यह बात जो सबके मन में हो,
मैं गीत नये फ़िर लिखूँगा!

मैं गीत नये फ़िर लिखूँगा,
सरसों, तिलहन की क्यारी पर,
पंडित जी की फूलवारी पर,
देश का कण-कण जिनसे सरोबार है,
उसकी शान, पटवारी पर।

मैं गीत नये फ़िर लिखूँगा,
गंगा-यमुना की धार पर,
कल-कल करती मझधार पर,
सावन में गाँव के मेले पर,
दुधिया गायों के तबेले पर।

मैं गीत नये फ़िर लिखूँगा,
गाँव-शहर की रीति पर,
दबे-कुचलों की जीत पर,
मछुआरों की टोली पर,
भोजपुरी मगही बोली पर।

मैं गीत नये फ़िर लिखूँगा,
कोयल की कूक निराली पर,
सौम्य सरल मतवाली पर,
जीवन की बाधाओं पर,
कृष्णा और राधा की युगल पर।

मैं गीत नये फ़िर लिखूँगा,
मैं गीत नये फ़िर लिखूँगा।।

अंकेश मिश्रा
परिवार सदस्य, सौगंधिका मोहापात्रा, पीजीपीएम

मेरी कहानी

नयी नयी नन्हीं थी घर से,
दुनिया थी अनजानी सी।
खोज रही थी सड़कों पे,
अपनी एक कहानी सी।

थोड़ा डर था, थोड़ी हैरानी,
थोड़ी थी नादानी सी।
अनजाना हर चेहरा था,
गलिया थी बेगानी सी।

फिर वहां एक चौराहा आया,
कहाँ ओर मुड़ें ये समझ न आया।
अँधेरा भी बढ़ रहा था,
दिल भी था सहमा-घबराया।

सोचा मैंने, "देख ली दुनिया,
लौट चलें? अब वक़्त नहीं है।
ना जाने क्या सोच के निकली,
तू इतनी भी सख्त नहीं है।
जो देख आई तू दुनिया पूरी,
वो दुनिया अनजानी सी,
क्यों ढूंढ़ रही थी सड़कों पे तू
अपनी एक कहानी सी?"

बुरा लगा पर बात सही थी,
मेरी ही नादानी थी।
कम आँकती खुद को,
आदत मेरी ही पुरानी थी।
अब तो निबटना मुड़े ही पीछे,
आगे को चलते जाना था।

खुद को खुद से सहरा के खुद को
खुद ही गलत बताना था।

हाँ, डर भी था मन में,
खो जाने का डर पुराना।
"छोड़ो, देखा जायेगा, सीधा-
सीधा बस चलते जाना.."
यह सोच के पहला कदम उठाया,
बस वही था मुश्किल, कदम उठाना।
फिर तो सीधा चलते-चलते
कहाँ और मुड़े वो खुद न जाना।
खूब पता था सड़कों को भी,
अब इसको न वापस आना।
वो चौबारे, गली, मोहल्ले-
सब कुछ था बीता अफसाना।

पर वो तो कुछ पल का नया जोश था,
जोश था तो फिर कहाँ होश था?
होश आया जब जोश गया,
फिर थोड़ी परेशानी थी।
चली आयी अब इतनी दूर,
पीछे मुड़ना नादानी थी।
थोड़ी सी देखी थी दुनिया,
पर अब भी वो अनजानी थी।
अभी कहाँ मिली थी मुझको,
मेरी जो कहानी थी।।

स्वाति गोयल
परिवार सदस्य, सौगंधिका मोहापात्रा, पीजीपीएम

स्वदेशानुराग

सूरज की रोशनी जिसे केसरी पगड़ी पहनाती हैं,
शांति की चादर के बीच अशोका की जीत दिखलाती है,
हरे भरे फसल को अपनी गोद में खिलाती हैं,
ये मेरे प्यारे हिंदुस्तान की मिट्टी है।

जिसकी सुरक्षा करते ऊंचे पहाड़ हैं,
जहां जन्म लेता हर जवान, शेर की दहाड़ है,
जहां नदिया ममता की धार बहाती है,
जो विभिन्नता में एकता को जगाती है,
ये मेरे प्यारे हिंदुस्तान की मिट्टी हैं।

जहां हर दिन एक नया त्योहार है,
जहां की रीत और योग हर देश के लिए उपहार है,
जिसके कण कण में संस्कृति का निवास हैं,
जहां सपनों की सीमा नहीं, बस उड़ान की प्यास है,
ये मेरे प्यारे हिंदुस्तान की मिट्टी है।

जिसने बनाई चंद्र पर पहचान
जो पहुंचा कर आई मंगल पर यान,
जिसने लिखा हर बड़े शिखर पर नाम,
आत्मनिर्भरता की टोच अब है जिसका अभियान,
ये मेरे प्यारे हिंदुस्तान की मिट्टी है
ये मेरे प्यारे हिंदुस्तान की मिट्टी है।।

वंशिका ज़वेरी
परिवार सदस्य, आयुषी कंजर, पीजीपीएम

राम-करण

"राम-राम" तो कहे होंगे, पर कभी ना "राम" में रहे होंगे
प्रेम बहुत तुम किये होंगे, पर 'सियाराम' कहाँ जिये होंगे!
खुद में झाँक के देखो तो क्या "राम" में कभी किये मनन?
सिर्फ माथे पर भगवा तिलक नाये कैसे होगा राम-करण?

'हम हिन्दू हैं' बस कहना लो, कब 'हिन्दू' तुम बन पाओगे?
'भारत' से सनातन-सफर लिए जब "राम" तक तुम जाओगे।
'प्रचार' छोड़ जब 'बिचार' में तुम 'श्री राम' पे मग्न रखोगे मन,
तब शायद तुम ला पाओगे पहचान में अपने 'राम-करण'।

'रामभक्त' तो हो लोगे पर त्याग-दया कब जानोगे?
जब मर्यादा तुम लाओगे और सत्य संग कर पाओगे।
'राम!'-उच्चारण-कर यदि करो हनुमन्त जागरण,
तब ही सीना चीर कर तुम जता पाओगे 'राम-करण'।

'राम'-आचरण लाना है तो पुरुषार्थ को जानना होगा,
पुत्र, सखा, भाई आदि में तुमको उत्तम बनना होगा।
यातना अनन्त सहकर भी जब कर पाओ तुम धर्म रक्षण,
तब जानोगे रामार्थ तुम और यथार्थ होगा 'राम-करण'।

'हम-हमारा' सोच से पहले 'दूसरे-सबको' आगे रखना,
तब ही जाकर अपने अन्दर दिव्य पावन 'राम' खोजना।
चाहे लाखों गंगा धो लो, या कर लो सारे धर्म वरण,
नामकरण तो कर लोगो; क्या कर पाओगे 'राम-करण'?

अजय कुमार महापात्रा
परिवार सदस्य, सौगंधिका मोहापात्रा, पीजीपीएम

स्वयं की खोज

जब अकेलेपन की शिकायत की खुद से मुलाकात हुई

जब किसी की मदद करने के लिए हाथ बढ़ाया तो खुद को उनके साथ का जरूरतमंद पाया

जब कभी लगा मुझ में कोई ऐब नहीं है तो आइना सामने नजर आया

जब भी सोचा मुझसे अच्छा कुछ नहीं हो सकता खुद को जलन की भावना से ग्रस्त पाया

जब भी किसी से बहस हुई तो पता चला लड़ाई खुद से थी

जब दिन के अंत में सोने गई तो एहसास हुआ एक प्यारी सी नींद के लिए थकान की जरूरत थी

अब जीवन अच्छा सा लगता है ....शायद कुछ बदल गया है

वह क्या बदला है उसको जब ढूंढने की कोशिश की तो समझ आया कि खुद को जरा और समझने की मशक्कत थी

और अब जब लगा कि खुद को जान लिया है तो पता चला कि यह तो जिंदगी भर की कसरत है

पापरी नाथ
संकाय सदस्य, भारतीय प्रबन्धन संस्थान, तिरुचिरापल्ली

नाम में क्या रखा है?

मेरे भैया और मैं, अपनी नानी को 'माईमम्मी' कहकर बुलाते थे। यह कब शुरू हुआ, किसी को ठीक से याद नहीं है। बचपन में हम दोनों उन्हें मम्मी कहते थे और अपनी माँ को उनके नाम के साथ मम्मी (माँ का उपनाम + मम्मी) जोड़कर बुलाते थे। मुझे यकीन है कि बड़ों ने हमें हमारी माँ का नाम हटाकर केवल मम्मी कहने के लिए कहा था। लेकिन फिर हम नानी को कैसे संबोधित करें? वे कैसे समझेंगे कि हम किस मम्मी की बात कर रहे हैं? और निश्चित रूप से, अजनबी यह सुनकर चौंक जाएंगे कि मेरे पास दो लोग हैं जिन्हें हम मम्मी कहते हैं। घर के बड़े हमारे नानी के साथ मम्मी के नाम से जुड़े भावनाओ को खारिज नहीं करना चाहते थे। उन्होंने बड़ी संजीदगी से हमे सिखाया की हम हमारी माँ को मम्मी बुलाएंगे और नानी को माईमम्मी। मेरी माँ और मामा उन्हें 'माई' कहते थे और दोनों मौसियाँ उन्हें 'मम्मी जी' कहती थीं। शुरुआत में, वे चारों अपने माता-पिता को मम्मी जी और पापा जी कहकर बुलाते थे। लेकिन एक बार मेरी माँ ने सुना कि कोई अपने माता-पिता को माई और बाबूजी कहकर बुला रहा था और अगले दिन से उन्होंने अपने माता-पिता को इसी तरह बुलाना शुरू कर दिया। मेरे मामा ने भी ऐसा ही किया। इसलिए, यह संबोधन विभाजन हो गया।

काश कि मैंने भी कुछ ऐसा ही किया होता। जब मैं 8-9 साल की थी, मैंने अपनी माँ से पूछा कि हमें सभी पुरुषों को 'आप' कहकर संबोधित करना सिखाया गया, तो किसी ने महिलाओं के लिए ऐसा क्यों नहीं सिखाया। उन्होंने थोड़ी भावुक आवाज में कहा, 'तुम अब शुरू कर सकती हो '। मैंने एक-दो दिन के लिए ऐसा किया और फिर ' पुरानी आदत' ने 'विकसित चेतना' पर जीत हासिल कर ली। मैं वापिस से 'तुम' पे चली गयी। एक दिन, उन्होंने कहा कि उन्हें 'माँ' शब्द अन्य संबोधनों से बेहतर लगता है। मैंने उनसे कहा कि अब से मैं तुमको माँ कहकर बुलाऊंगी । लेकिन, हमेशा की तरह, आदत ने फिर से जीत हासिल कर ली। उन्होंने कभी जोर नहीं दिया और मैं फिर से उन्हें मम्मी कहने लगी । लेकिन पिछले 5-6 सालों में, मैंने देखा है कि जब भी मैं परेशान होती हूँ और 'माँ' शब्द को दो-तीन बार कहती हूँ, तो मुझे शांति मिलती है। मेरी अपनी माँ के प्रति जो भावनाएँ हैं, मुझे लगता है कि 'माँ' शब्द की आरामदायकता 'मम्मी' की तुलना में अधिक अनुकूल है। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि मेरे पति अपनी माँ को 'अम्मा' कहकर संबोधित करते हैं। शेक्सपियर कह सकते हैं कि नाम में क्या रखा है, लेकिन मुझे लगता है कि जब लेबल की बात आती है तो बहुत फर्क पड़ता है। लेबल की गहरी सामाजिक-भावनात्मक गतिशीलता के अलग-अलग अनुभव होते हैं। क्या यह सब एक सामाजिक निर्माण है? मुझे नहीं पता। लेकिन क्यों 'माँ' शब्द बहुत सुकून और आरामदायक लगता है, यह श्वास के तालमेल के कारण भी हो सकता है। जब हम 'माँ' कहते हैं, तो हम मूल रूप से गहरी सांस छोड़ रहे होते हैं। तो, शायद इसमें नामों के उच्चारण या अर्थ में कुछ फर्क है।

बड़े होते हुए, मुझे मेरा नाम पसंद नहीं था। मुझे लगता था कि यह मेरे व्यक्तित्व के साथ मेल नहीं खाता है। उस समय, मैं खुद को एक योद्धा मानती थी जो अपनी उम्र के मुकाबले, बड़े संघर्षों का सामना कर रही थी। 'शालिनी' नाम, जिसका अर्थ 'विनम्र' है, इस लड़की के अनुभवों के साथ न्याय कैसे कर सकता है? लेकिन उस समय, मुझे नहीं पता था कि कौन सा नाम बेहतर होगा। शायद, देवी दुर्गा के उग्र रूपों में से एक नाम। हालांकि, जब मैं अपने बीसवें दशक के अंत तक पहुंची, तो मुझे एहसास हुआ कि योद्धा होने के साथ-साथ, मैं एक जीवन की विद्यार्थी भी हूँ। मेरे जीवन में जो ख़ास मिलें और परियोजनाएं मेरे लिए बनी, उनके प्रति समर्पित भी हूँ। मैं इस धरती की संतान भी हूँ। इन सभी अर्थों को 'पार्थ' नाम निर्दिष्ट करता है। इस बार, मैंने अपनी सबसे बड़ी दुश्मन 'आदत' को हरा दिया। कोविड के दौरान, मैंने कानूनी रूप से 'पार्थ' को अपने उपनाम के रूप में जोड़ लिया। और पहली बार, मुझे अपने नाम के साथ घर जैसा महसूस हुआ। हाँ, यह मैं हूँ। पार्थ! शालिनी पार्थ (कृपया इसे बॉन्ड! जेम्स बॉन्ड! की शैली में पढ़ें)। तो, वे कहते हैं कि नाम में क्या रखा है। बहुत कुछ। भावना, गर्व, आराम, अर्थ, संबंध, आशा!

शालिनी पार्थ
संकाय सदस्य, भारतीय प्रबन्धन संस्थान, तिरुचिरापल्ली

धकियाती संस्कृति (व्यंग्य)

परिवर्तन जीवन की अनिवार्यता है। आज परिवर्तन का रथचक्र द्रूत गति से हमारी भावनाओं, आदर्शों और मूल्यों को रौंदते हुए आगे बढ़ रहा है। हमारी संस्कृति का भी पूरी तरह कायापलट हो गया है। सत्य ,त्याग, अहिंसा परोपकार ,सहनशीलता जैसे शाश्वत मूल्य भी आज प्रश्न चिह्नों से घिर गए हैं। संस्कृति दुष्कृति बनती जा रही है। हमारी पुरानी संस्कृति में धैर्य को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। लेकिन आज धैर्य धारण हमारी अक्षमता और मूर्खता का परिचायक माना जाता है। आज तो सब्र भी बेसब्र हो गया है। हर चीज को जल्दी से जल्दी पा लेने की इच्छा हमें अधीर कर रही है। हम अपनी बारी आने तक की प्रतीक्षा नहीं करते। आगे वाले को लंगड़ी मार कर गिरा देने और उससे आगे बढ़ने में हमें कुछ गलत नहीं लगता, इसे व्यावहारिकता का नाम देकर हम अपने कार्य को उचित साबित करते हैं।

एक समय था जब अंतरात्मा हमें हमारी गलतियों पर कचोटती थी। आज हम अपनी इस कारस्तानी को उपलब्धि मान, उसका ढिंढोरा पीटते हैं। खरगोश और कचुए की कहानी में आज नया मोड़ आ चुका है। आज का खरगोश कछुए का काम तमाम करके ही सोएगा।

पहले लोग 'प्राण जाए पर वचन न जाए 'वाले सिद्धांत को पूरी निष्ठा से मानते थे, पर आज बेशर्मी से मुकर जाना ही सबसे बड़ी समझदारी मानी जाती है। हर परमार्थ आज स्वार्थ बन चुका है। हमारा दृष्टिकोण केवल मैं और मेरे तक सीमित हो गया है। किसी के सुख दुःख में साथ देने को ,हम किसी की जिंदगी में टाँग अड़ाना मानते हैं। सत्य की तूती असत्य के नक्कार खाने में अनसुनी हो गई है। भ्रष्टाचार आज शिष्टाचार पर हावी हो चुका है।

पहले लोग किसी को गिरते हुए देखते थे तो, फौरन ही उसका हाथ पकड़कर बचा लेते थे। आज तो हम लोगों के रास्ते में केले का छिलका फेंक, छिपकर उनके रपटने का दृश्य देखते हैं। हमने सीखा था कोई एक गाल पर मारे तो दूसरा गाल उसके आगे बढ़ा दो। इसके पीछे का फ़लसफ़ा था कि मारने वाले को अपने कृत्य पर लज्जा आएगी और वह फौरन मारना भूल कर आपके कदमों में गिर कर क्षमायाचना करेगा। पहले लोग घनघोर आशावादी होते थे। आज दृष्टिकोण बदल गया है। आज हमारी यह हरकत उसे हमारी हिमाकत लगेगी और फिर हम या तो उसके मुकाबले को तैयार हो जाएं या फिर यह मसीही अंदाज़ हमें हॉस्पिटल की सैर करवा देगा।

हमारी विनम्रता हमारी कायरता और कमजोरी समझी जाएगी। त्रेतायुग में भी एक बार श्रीराम जी की विनम्रता का समुद्र ने ग़लत अर्थ लगाया था। आज के लोग बहुत प्रैक्टिल हैं, ऐसा कोई चांस ही नहीं लेते। पहले लोग लखनवी अंदाज़ के कायल थे।" पहले आप पहले आप" करते रह जाते और ट्रेन खुद पहले आप हो गंतव्य पर पहुँच जाती, ये प्लेटफॉर्म पर औपचारिकता निभाते रह जाते। बंधुवर, इन बेबकूफियों से बाहर निकल कर ट्रेन पकड़ो वरना लक्ष्य पाने की बात भूल जाओ। आज तो भई धक्का मारो, आगे बढ़ो,"का जमाना है। पीछे वाला आगे वाले को धक्का मारता है और उसकी जगह ले लेता है। उसके बाद उसके पीछे वाला मोर्चा संभालता है। एक बार कुर्सी मिल जाए, तो लोग उस पर से उठने से घबराते हैं। बाथरूम जाना है, पर नहीं उठ सकते क्योंकि उठते ही कुर्सी पर कोई दूसरा बैठ जाएगा। सचमुच कुर्सी बलिदान माँगती है।

यह धकियाती संस्कृति पूरी तरह लक्ष्य केंद्रित है। साधन कैसा ही हो, येन केन प्रकारेण साध्य हासिल होना ही चाहिए। इसके लिए किसी की भी बलि चढ़ाई जा सकती है। मूल्यों की, परिवार की, समाज की, देश की। बड़ी लकीर को छोटा करने के लिए उससे बड़ी लकीर न खींचकर, उस लकीर को मिटा देना ही इसका मूल सिद्धांत है।

परिवर्तन का यह रूप सचमुच शोचनीय है। अग्राह्य है। परिवर्तन सदा विकास की दिशा में बढ़ता है। जड़ता और संकीर्णता से दूर जाकर उजाले का आलेख लिखना ही उसका एक मात्र उद्देश्य होना चाहिए। हमें यह धकियाती संस्कृति नहीं चाहिए। हमें तो उदारता और त्याग जैसे मूल्यों का विकास चाहिए, जो इस परिवर्तित विचार धारा से मेल नहीं खाता। अतः इस धकियाती संस्कृति को धकिया कर, अपनी शाश्वत संस्कृति की ओर मुड़िए। यह दृष्टिकोण हमें असत्य से सत्य और मृत्यु से अमरत्व की ओर ले जाएगा। यही श्रेयस है। यही वांछनीय है,यही काम्य है।

वीणा गुप्ता
परिवार सदस्य, मनन गुप्ता, ईडीपीएम

गंगा की स्मृतियां

मैं गंगा किनारे बसे एक शहर प्रयागराज से हूँ। गंगा किनारे रहने वालों की स्मृतियों में हर एक भावनाओं का मिश्रण होता है - कैसे सुख और दुख, जीवन और मृत्यु, दोनों में सहज भावना से रहना। मेरी पहली स्मृति गंगा जी के साथ तब की है जब मैं शायद 7-8 साल की थी। हर माघ यानी मार्गशीर्ष (दिसंबर-जनवरी) के महीने में जब स्कूल की छुट्टी होती थी, तब मुझे मेरी दादी मुझे गंगा तट पर अपने कपड़े और पूजा की डलिया की रखवाली के लिए ले जाती थीं। इसका मेहनताना गंगा स्नान और गुलाब का एक फूल पूजा के फूलों से वापस लाना होता था। फिर शाम को एक बड़े संत, त्यागी जी महाराज, के प्रवचन सुनने गंगा किनारे लगे माघ मेले में जाना होता था और वहाँ की फीस एक गुब्बारा या रामदाना मिलती थी।

पर एक अप्रत्यक्ष तरीके से जिंदगी की बड़ी सीख गंगा के किनारे मिला करती थी। कभी गंगा किनारे होने वाले संस्कारों में, कभी त्यागी जी के प्रवचनों में, और कभी अनवरत आते साधु-संतों और श्रद्धालुओं की भीड़ में विविधता में भक्ति की एकता को देखकर मिलती थी। गंगा के किनारे की एक और बात इस महीने में देखने को मिलती है जो कि सनातन धर्म की विभिन्न शाखाओं जैसे कि विष्णु भक्त, शिव भक्त, अघोरी और नागा सन्यासी, सबका अलग-अलग मत होते हुए भी एक साथ गंगा में स्नान करना एक अनूठी विविधता को दर्शाता है। यह संयोग ठंड के इस महीने में ही देखने को मिलता है। जिसे यहाँ की भाषा में साही स्नान कहते हैं। शायद मेरे हिंदुत्व के बारे में ज्ञान को इन्हीं पारंपरिक दृश्यों से ही विस्तार मिला।

अगली स्मृति जो मेरी भागीरथी के साथ है, वह किंचित पाठकों को सहज न लगे, पर हम इलाहाबाद वासियों के लिए गंगा के किनारे पर होने वाली जिंदगी के अंतिम सत्य अर्थात (मृत्यु) की क्रियाएँ सहज होती हैं। चूंकि मैं प्रयागराज से हूँ, तो आस-पास के शहर वाले मेरे रिश्तेदार जब भी किसी की मृत्यु होती थी, तो हमारे घर के सामने वाले पीपल के पेड़ से उसकी अंतिम यात्रा शुरू करते थे। घर के पुरुष, घाट से आकर इतनी सहजता से दाह संस्कार की क्रिया आपस में साझा करते थे, जैसे कि यह क्रिया तो जिंदगी का हिस्सा ही है। शायद आजकल के बच्चों को ये बातें पता न हों - कि कैसे बेटा शैय्या पर सिर फोड़ता है या पुरुष का सीना और स्त्री का कुल्हा तोड़ना पड़ता है। किसको ज्यादा समय लगा जलने में और किसको कम लगा, ये सब चर्चाएँ कौतूहल से ज्यादा बहुत आम चर्चा थीं। गंगा जी की कृपा से मेरे लिए जिंदगी के इस पहलू को समझना और इसे स्वीकारना आसान हो गया।

इसी कड़ी में आगे बढ़ते हुए मैं आपको सावन यानी जुलाई-अगस्त के महीने में ले चलती हूँ, जो हमारे लिए बाढ़ देखने का मौसम होता था। मेरे दादाजी ने अपनी पढ़ाई के वक्त गंगा के किनारे बने एक अखाड़े, निरंजनी अखाड़े में एक कमरा किराए पर लिया हुआ था, जो अभी तक हमारे पास है। उसकी छत से गंगा घाट और छोटे हनुमान जी साफ दिखते थे, क्योंकि रोड उस पार ही गंगा घाट था। इसलिए बाढ़ के समय जब गंगा जी अपने उफान पर होतीं, तो उसकी छत, जो कि आज की भाषा में बाढ़ देखने का प्राइम लोकेशन थी।

एक बार ऐसे ही छोटी दादी और चाचा-चाची के साथ हम लोग छत पर खड़े नीचे देख रहे थे कि कैसे कुछ बच्चे तेज बहते हुए पानी में भी तैरने का मजा ले रहे हैं। तभी वहां पर बहती हुई एक लाश किनारे सीढ़ी पर जा लगी। हमारे बीच और निकट रहने वश साधु-संन्यासियों में खलबली मच गई। लेकिन उसके बाद जो हुआ, उसने मेरे चाचा, साधु-संन्यासियों और दादी के लिए इज्जत और भी बढ़ा दी। क्योंकि इन सबने बाढ़ में कटे हुए घाट की परवाह न करते हुए भी उस लाश को गंगा से निकालकर विद्युत शवदाहगृह तक पहुंचाकर उसका कल्याण किया। इस प्रसंग से मुझे मानवीय संवेदना और जीवन तथा मृत्यु दोनों का समान सम्मान करने की प्रेरणा मिली।

पावन गंगा नदी को इसलिए भी इतना वृहद दर्जा प्राप्त है क्योंकि वह न सिर्फ जीवन के प्रमुख तत्व शीतल जल से हमें तृप्ति करती हैं, बल्कि निराला और हरिवंश राय बच्चन जैसे लेखकों की लेखनी पर जीवन के हर एक पहलू के बारे में विस्तृत नजरिया देते हुए हमें अपनी गोद में समा लेती है। जय हो गंगा मैया की!

गरिमा सिंह
परिवार सदस्य, प्रो. जंगबहादुर सिंह

स्वेच्छा और वेदांत

आधुनिक मीडिया और साहित्य ऐसे विचारों से भरा पड़ा है जो लोगों को "सही विकल्प" चुनने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, कि वे अपने द्वारा चुने गए विकल्पों और प्राप्त परिणामों के लिए स्वयं जिम्मेदार हैं। MBA की तेज़ रफ्तार ज़िंदगी, चाहे जानबूझकर या अनजाने में, "सही विकल्प चुनने" की अवधारणा को तब तक गहरा करती है जब तक कि व्यक्ति को मनचाहा परिणाम न मिल जाए। लेकिन मैंने हमेशा खुद से यह सवाल किया है की, "मेरे द्वारा चुने गए विकल्पों में से कितने मेरे अपने हैं? क्या मेरे कार्यों का परिणाम पूर्व-निर्धारित हैं? क्या मैं खुद से निर्णय लेता हूँ, एक स्वतंत्र इकाई के रूप में, या मैं हमेशा किसी जीवन से बड़े प्रभाव के अधीन हूँ?"

सौभाग्य से, मैं इस सवाल का उत्तर खोजने वाला पहला व्यक्ति नहीं हूँ, और "स्वतंत्र इच्छा / स्वेच्छा" (कि जीव अपने कार्यों का मार्ग चुनने के लिए स्वतंत्र हैं) की अवधारणा मानव समाजशास्त्रीय विकास में इतनी गहराई से अंतर्निहित है कि यह आधुनिक लोकतांत्रिक प्रथाओं की आधारशिला बन गई है। वास्तव में, वेदांत में इसके बारे में स्पष्ट तर्क भी हैं। चलिए समझते हैं।

महान कौरव सेना के सामने खड़े होकर, अर्जुन अपने ही परिवार के सदस्यों के खिलाफ हथियार उठाने के विचार से व्यथित था। संकट में पड़े कौन्तेय ने श्रीकृष्ण से अपने मन की दुविधा को दूर करने के लिए कहा और इस प्रकार भगवान ने योद्धा को श्रीमद्भगवद्गीता का उपदेश दिया। भगवान ने कहा:

"तुम्हारी भागीदारी के बिना भी, विरोधी सेना में खड़े योद्धा नष्ट हो जाएंगे। ये योद्धा पहले ही मुझसे मारे जा चुके हैं, और तुम मेरे काम का केवल एक साधन हो।"

इसका तात्पर्य यह है कि घटनाएँ उनके द्वारा पूर्वनिर्धारित हैं और पार्थ केवल एक साधन है। क्या इसका मतलब यह है कि अर्जुन के पास पूर्वनिर्धारित को आगे बढ़ाने में एक साधन बनने का विकल्प है, अर्थात् अर्जुन के पास स्वेच्छा है?

दक्षिणेश्वर में एक भाषण में, श्री रामकृष्ण परमहंस ने कहा था:

"ईश्वर ही सब कुछ करता है। ईश्वर को प्राप्त कर चुके लोग जानते हैं कि स्वेच्छा केवल एक भ्रम है। वास्तव में, मनुष्य मशीन है और ईश्वर उसका संचालक; मनुष्य गाड़ी है और ईश्वर उसका चालक है।"

इसलिए, हम समझते हैं कि ब्रह्म यह जानता है कि हम कौन से चुनाव करने जा रहे हैं, क्योंकि ब्रह्म हीं हमें वह चुनाव करने के लिए प्रेरित करता है। लेकिन फिर यह कैसे उचित है कि हमें उन चुनावों के लिए दंडित किया जाए जिन्हें ब्रह्म ने हमें करने के लिए प्रेरित किया? ऐसा इसलिए है क्योंकि ब्रह्म हमें अब जिन चुनावों के लिए प्रेरित करता है, वे पिछले जन्म में किए गए चुनावों पर आधारित होते हैं, और पिछले जन्म में किए गए चुनाव उससे पहले के जन्म पर आधारित होते हैं, और इसी तरह, यह अनंत काल तक चलता रहता है। कोई पहला कर्म नहीं है, आत्मा और ब्रह्म अनंत काल से अस्तित्व में हैं।।

आदि शंकराचार्य ने ब्रह्म सूत्र पर अपनी टिप्पणी में लिखा है:

"यद्यपि आत्मा की क्रिया स्वतंत्र नहीं है, फिर भी आत्मा कर्म करती है। भगवान उसे कर्म करने के लिए बाध्य करते हैं, लेकिन वह स्वयं कर्म करती है। भगवान अब उसे कार्य करने के लिए प्रेरित करते समय उसके पिछले प्रयासों का ध्यान रखते हैं, और उन्होंने इसे एक पूर्व अस्तित्व में कार्य करने के लिए प्रेरित किया, उस अस्तित्व से पहले के प्रयासों का ध्यान रखते हुए।"

क्या मुझे फिर क्रियाओं में संलग्न होना बंद कर देना चाहिए? इस पर शंकराचार्य श्रृंगेरी मठाधिपति श्री चंद्रशेखर भारती महास्वामी ने एक समान प्रश्न का उत्तर दिया:

"भाग्य आपके पिछले स्वतंत्र इच्छा के प्रयोग का परिणाम है। पिछले में अपनी स्वतंत्र इच्छा का प्रयोग करके, आपने परिणामस्वरूप भाग्य को लाया। वर्तमान में अपनी स्वतंत्र इच्छा का प्रयोग करके आप अपने पिछले रिकॉर्ड को मिटा दें यदि यह आपको चोट पहुँचाता है, या यदि आप इसे आनंददायक पाते हैं तो इसे जोड़ें। भाग्य आपकी स्वतंत्र इच्छा को निष्फल करने के लिए कोई बाहरी और नई चीज नहीं है; यह पहले से ही आपके अंदर है।"

निष्कर्ष:

वेदांत इस बात पर जोर देता है कि भाग्य आपके बाहरी नहीं, बल्कि आपके पिछले कार्यों के परिणामों का कुल योग है। भाग्य पिछले कर्म है; स्वतंत्र इच्छा वर्तमान कर्म है। दोनों वास्तव में एक ही हैं। इसलिए, हम जो विकल्प चुनते हैं, वे हमारे द्वारा अब तक चुने गए विकल्पों का योग मात्र हैं। इसे बदलना या उसी पैटर्न को जारी रखना हमारे ऊपर निर्भर करता है।

अमीअ आनंद
पीजीपीएम एचआर

म से माँ

1996 की बात है, जब मेरी माँ, माँ बनी। और उन्हें गर्भावस्था के दौरान ही ऐसा लगा कि मैं ऐसा क्या करूँ जो मेरा बच्चा जीवन में कुछ अनूठा कर सके। इसी बात को ध्यान में रखते हुए, वे मेरे पिता के साथ बिहार स्कूल ऑफ योग, मुंगेर योग आश्रम, अपने गुरु से मार्गदर्शन प्राप्त करने गईं। उन्होंने सात्विक जीवन के साथ, आध्यात्मिक जीवन जीने का आचरण करने का संकल्प दिया। और वहाँ जाकर उन्हें लगा कि बच्चे में जो आंतरिक समझ होती है, वह गर्भावस्था के दौरान ही दी जा सकती है, जो बाहर से प्राप्त नहीं हो सकती। और मेरी माँ उसी समय से, वह सभी कदम उठाने लगी जो मेरी परवरिश के लिए महत्वपूर्ण था। उन्होंने दैनिक जीवन और आध्यात्मिक जीवन में एक संतुलन बनाया। मैं बता दूं कि मेरी माँ कामकाजी महिला हैं, उन्हें इंजीनियरिंग कॉलेज में पढ़ाते हुए 30 साल हो गए हैं। उन्होंने शादी के साथ घर को संभालने के साथ-साथ, मेरी परवरिश में कोई कमी ना करते हुए, अपनी पढ़ाई को जारी रखा। और एमएससी गणित के बाद, मास्टर्स इन कंप्यूटर एप्लिकेशन की डिग्री हासिल की। वे अपनी बच्ची में एक ताकतवर स्त्री का स्वरूप देखना चाहती थीं। दो साल तक मेरी माँ ने दूसरे शहर जाकर नौकरी की। उसी दौरान उन्हें गणित में पीएचडी करने का ख्याल आया। और 2009 में उन्होंने डॉक्टरेट की डिग्री प्राप्त की। जीवन के 24 घंटे में 12 घंटे की नौकरी, अनगिनत घर की ज़िम्मेदारी के साथ मां होने का पूरा दायित्व निभाया। 2012 में उन्होंने शासकीय नौकरी छोड़कर मेरी आगे की शिक्षा के लिए इंदौर आ गईं, जिससे कि मैं अपना सीए बनने का सपना पूरा कर सकूं। 2023 में मैंने सीए डिग्री हासिल की और साथ ही एमबीए इन फाइनेंस भी कर लिया। जैसे वह अपने जीवन में कठोर मेहनती हैं, मुझे भी और आगे बढ़ने के लिए हर दिन प्रेरित करती हैं। मेरी सीए की यात्रा में कई उतार-चढ़ाव आए लेकिन उन्होंने मेरा साथ कभी नहीं छोड़ा। उन्होंने मुझे मेरे मुश्किल सफर में डॉ कलाम साहब के संघर्ष के समय में उन्हें मिला, ऋषिकेश के पूज्य स्वामी डॉ शिवानंद सरस्वती जी से मिला आशीर्वचन याद दिलाया कि "पराजय होने की भावनाओं को पराजित करो"। मेरा पढ़ाई में धैर्य ना छूटे इसलिए उन्होंने भी एमए योगा की पढ़ाई शुरू कर दी। और मेरी सीए की डिग्री के साथ-साथ उन्होंने एमए योगा की डिग्री प्राप्त की। सीए के बाद उन्होंने मुझे भारतीय प्रबन्धन संस्थान त्रिची से एक वर्षीय पोस्ट-ग्रेजुएट प्रोग्राम इन फिनेंशियल मैनेजमेंट करने के लिए प्रेरित किया। और उनकी इसी प्रेरणा से भारतीय प्रबन्धन संस्थान त्रिची से सर्टिफिकेट ऑफ़ मेरिट (प्रथम स्थान) और "बैच का स्टार" का पुरस्कार मुझे मिल पाया। मैं अपनी मां की शुक्रगुजार हूँ कि उन्होंने अपनी एकमात्र लड़की को न केवल शैक्षिक उपलब्धियों के लिए बल्कि सामाजिक, आध्यात्मिक और बहु-प्रतिभाशाली होने के लिए तैयार किया। आज मैं जो कुछ भी हूँ, अपनी मां की वजह से हूँ। इतना त्याग, इतनी मेहनत, इतना आत्मविश्वास, सपने पूरे करने की क्षमता, और आध्यात्मिक जीवन में प्रेरित करने का यह भगीरथ कार्य मेरी माँ जैसा ही कोई कर सकता है। वह माँ है या महामानव है, सोचने पर मजबूर हूँ। काश, मैं उनके सपनों को पूरा कर सकूं, यह मेरे जीवन की खुशकिस्मती होगी। मेरे लिए उन्होंने पूरा जीवन समर्पित कर दिया है। दुनिया की सभी माँ अक्सर बच्चों को बाहरी सामग्रीय दुनिया के लिए तैयार करती हैं लेकिन मेरी माँ ने मुझे आंतरिक दुनिया (जिसमें ज्ञान, मूल्य, नैतिकता, संस्कार, सहायता शामिल है) के लिए तैयार किया।

माँ के इन अनछुए पहलुओं के कारण ही मैं जो कुछ भी आज हूं वह संभव हो पाया है।

"आज भारत की लड़कियां स्वयं को कमजोर ना समझे" इस विषय पर भविष्य में कार्य करने का मेरा संकल्प है ताकि माँ से प्राप्त शिक्षाओं को सबमें बांच सकूं।

गीतांजलि अग्रवाल
पीजीसीएफएम, भारतीय प्रबन्धन संस्थान, तिरुचिरापल्ली

बेगमगंज: एक कस्बा जिसे मैं नानी-घर कहता हूँ

भारत के दिल में बसा एक छोटा सा शहर है बेगमगंज, जहाँ परंपरा और आधुनिकता का संगम होता है। यह कस्बा बीते युग की याद दिलाता है, जहाँ छोटी-छोटी संकरी गलियाँ और धीमी जीवनशैली है। शहरी जीवन की आपाधापी के बीच बेगमगंज अपनी अनूठी और रोचक कहानी कहता है, जो विपरीत परिस्थितियों में भी प्रगति की गाथा सुनाता है।

बेगमगंज के निवासियों के सामने सबसे बड़ी चुनौती बिजली की अनिश्चितता है। लंबे समय तक बिजली का न रहना यहाँ की आम बात है। गाँवों में लोगों के पास मीटरड (metered) कनेक्शन नहीं है, इसलिए उन्होंने जुगाड़ लगाया है। उच्च वोल्टेज उतार-चढ़ाव (fluctuation) से अनेक बार इलेक्ट्रिकल उपकरण खराब हो चुके हैं। एक बार तो पूरे गाँव के बल्ब खराब हो गए और किसी को पता नहीं चला कि क्या हुआ।

बिजली की इस अनिश्चितता के कारण कई निवासी महंगे गैजेट्स और उपकरण खरीदने से कतराते हैं। इसके बजाय, स्थानीय बाजार बैटरी से चलने वाले टॉर्च, बल्ब और वोल्टेज स्टेबलाइजर से भरे पड़े हैं। एक नया सबस्टेशन निर्माणाधीन है और प्रमुख ऊर्जा कंपनी अडानी ने स्थानीय डिस्कॉम को संभाल लिया है, जिससे भविष्य में बिजली आपूर्ति में सुधार की आशा जगी है।

आश्चर्यजनक रूप से, बेगमगंज में इंटरनेट कनेक्शन मजबूत है, जहाँ निवासी बिना किसी रुकावट के अपना दैनिक 1.5 GB डेटा काम और मनोरंजन के लिए उपयोग करते हैं, जो विपरीत परिस्थितियों में भी शहर की अनुकूलन क्षमता को दर्शाता है।

बाजार की बात करें तो बेगमगंज में नकली ब्रांडेड उत्पादों की भरमार है, जिन पर "ओरिजिनल," "जेन्युइन," और "कंपनी का माल" के लेबल लगे होते हैं। यह देखना काफी दिलचस्प है कि कैसे ये असंबंधित, नकली उत्पाद बाजार में पनपते हैं। दूसरी ओर, पारंपरिक मोबाइल दुकानों का व्यापार ऑनलाइन खरीदारी (e-commerce) के उदय के कारण घट रहा है। कई दुकानदार मूल्यों का मिलान करने और तेजी से बदलते उत्पाद स्टॉक के अनुकूल होने में संघर्ष कर रहे हैं। यहाँ के अधिकांश दुकानदार उत्पादों का बड़ा स्टॉक रखते हैं और उसके लिए पूर्व भुगतान करते हैं। कार्यशील पूंजी (working capital) और बिक्री अनुमान (sales forcasting) एक बड़ी समस्या है। वे थोक छूट (bulk discount) के लिए जाते हैं लेकिन 'समय के मूल्य' (time value of money) का पूरा लाभ उठाने में असमर्थ होते हैं।

भारत के कई अन्य शहरों की तरह, 'I love begumganj' भी बेगमगंज में मौजूद है ताकि यह अच्छा दिख सके। हालांकि, 'गंज' में लगी लाइटें खराब हो गई हैं, इसलिए रात में यह सिर्फ I love Begum दिखता है। बेगमगंज में स्वच्छता एक मुद्दा है। सड़कों पर पान मसाला और तंबाकू की पाउच का कचरा बिखरा हुआ है, हालांकि इन उत्पादों पर प्रतिबंध है। कचरे को समय-समय पर सफाईकर्मियों द्वारा एकत्रित किया जाता है, केवल इसे सड़क के किनारे डंप कर राख में बदल दिया जाता है।

आवारा जानवर भी बेगमगंज के निवासियों के सामने एक और चुनौती हैं। गौशालाएँ पूरी क्षमता से भरी हुई हैं, जिससे कभी उपयोगी रहे लेकिन अब त्यागे गए बैलों के लिए कोई जगह नहीं बची है। ये बैल शहर के यातायात के रहमोकरम पर हैं और कभी-कभी पास के लोगों के लिए खतरा बन जाते हैं। आवारा कुत्ते, बिल्लियाँ, और चूहे सड़कों पर घूमते दिखाई देते हैं, जहाँ विक्रेता चूहे मारने की दवा बेचते हुए गलियों में घूमते हैं।

इन सभी बाधाओं के बावजूद, बेगमगंज की आत्मा मजबूत है। यह मनोहर शहर भविष्य को गले लगाते हुए अपनी जड़ों को भी संजोए हुए है, जिससे परंपरा और प्रगति के बीच एक नाजुक संतुलन का प्रदर्शन होता है। निस्संदेह, बेगमगंज की एक आकर्षक कहानी है - एक कहानी जो भारत की विविधता और लचीलेपन का प्रतीक है।

शाश्वत जैन
भारतीय प्रबन्धन संस्थान, तिरुचिरापल्ली, पीजीपीएम

वयस्कता में बचपन की खोज

हम सोचते हैं कि हम जीवन में कई चीजों को बहुत परफेक्ट बना सकते हैं, अच्छी बात है। लेकिन, कुछ चीजें हमारे लिए परफेक्ट नहीं हो सकतीं। हमारे पास इसमें ज्यादा विशेषज्ञता नहीं है। इसके लिए, हम इसे बिना कोशिश किए ही छोड़ देंगे। लेकिन सच्चाई यह है कि कोई भी वह काम कर सकता है। जो उसे आसानी से आता है।

लेकिन, मनोरंजन के लिए इस तरह की चीज़ों को आज़माने में एक रोमांच है। यदि संभव हो तो इसे रिकॉर्ड करें । लंबे समय के बाद, जब आप इसे देखेंगे, तो आप सोचेंगे, "आह! जीवन का जितना हो सके उतना आनंद लें।" वह छोटी-छोटी खुशी है जो जीवन को अधिक रोचक बनाती है।

उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति नृत्य करना नहीं जानता है, तो एक अच्छा गाना लगाएं, घर के सभी दरवाजे बंद कर दें और परिवार के साथ मिलकर नृत्य करें। हमारा परिवार हँसता-खिलखिलाता है। हर कोई चिढ़ाता है। लेकिन, अगर आप उस क्षणों को कई सालों के बाद याद करना तो बिना लावण्य के वह डांस आपको बेहद खूबसूरत यादें देगा।

गीत ई एक अज्ञात गीत के लिए एक गीत गाओ। अगर इसमें कोई तर्क नहीं है तो कोई बात नहीं यह बेहद मजेदार होगा।'

यदि आप चित्र बनाना नहीं जानते तो कोई बात नहीं। मैं जो चित्रित कर रहा हूं वह केवल कला है। इसे अपनी पसंद के अनुसार बनाएं और दीवार पर चिपका दें। किसी भी प्रकार का व्याकरण निर्धारित न करें कि ऐसा होना चाहिए। वह कला आपको आपके अंदर का बच्चा और मासूमियत दिखाएगी।

किसी ने मुझसे पूछा कि मैं इतना बड़े होकर, तुम ये तुच्छ बातें क्यों कर रहे हो?... मुस्कुराते हुए कहें, 'जो मुझे पसंद हैं मैं यही करता हूं।'

जब हम सभी बच्चे होते हैं, तो हम इस परफेक्ट को नहीं देखते हैं, हम ऐसे काम करते हैं जो हमारे दिल को खुश करते हैं। आइए इसे बिना किसी डर या चिंता के बिना और बेफिक्र होकर करें । तभी हम खुश होंगे. यह बिना किसी मिलावट के अपने लिए ही सच्ची ख़ुशी होगी, किसी के लिए नहीं। जैसे-जैसे हम बड़े होंगे हम उस ख़ुशी को मिस करने लगेंगे। अपनी वयस्कता का इलाज करने का सबसे अच्छा तरीका अपने भीतर के बच्चे को गले लगाना और स्वीकार करना है।

एल. इंदु
संपादकीय सहायक, भारतीय प्रबन्धन संस्थान, तिरुचिरापल्ली

पहाड़ और ईश्वर

पहाड़ के लोगों के अपने देवी-देवताओं से रिश्ते नाथ और सेवक के नहीं होते, बल्कि आत्मीयता के होते हैं। नाते रिश्तेदारों की तरह होते हैं। हमारे लिए नंदा/ गौरा (पार्वती) आराध्य से अधिक बेटी है, बहन है, "ध्याण" (विवाहित बेटी) है, तो भगवान शिव (भोलेनाथ) यहाँ के दामाद हैं, जब हमारी बेटी, बहन और ध्याण आपकी अर्धांगिनी हैं, तो शिव हमारे भेना (जीजा) हुए, दामाद हुए। पांडवों को हम पितृ की तरह पूजते हैं। पांडू और पांडवों का रीति-रिवाज़ से श्राद्ध किया जाता है। हनुमान जी से भी बहुत क़रीबी रिश्ता है। उनके शक्तिशाली स्वरूप का यहाँ सम्मान भी होता है, तो दूसरी ओर वे हृदय के क़रीब होने से उनके प्रति नाराज़गी भी है, और नाराज़गी भी ऐसी जैसी किसी प्रिय रिश्तेदार से हो।

चमोली में द्रोणागिरी नामक एक गाँव है, शायद कई लोग इस नाम से परिचित भी होंगे। आदि-काव्य-रामायण में एक प्रसंग आता है, जब लक्ष्मण जी मेघनाद से युद्ध करते हुए मुर्छित हो जाते हैं, तो हनुमान जी को संजीवनी बूटी लेने के लिए द्रोणागिरी भेजा जाता है। हनुमान जी पूरा पहाड़ लेकर आ जाते हैं। द्रोणागिरी के लोग "पर्वत देवता द्रोणागिरी" को अपना आराध्य मानते हैं। यहाँ के लोगों को इस बात की टीस है कि, हनुमान जी आप तो हमारे प्रिय थे, फिर "पर्वत देवता " का एक हिस्सा क्यों ले गये? परम्परा के अनुसार आज भी हर साल आषाढ़ महीने में पर्वत देवता की पूजा होती है। पर्वत देवता का पश्वा (जिस पर देवता अवतरित होते हैं) इस पूजा उत्सव में एक हाथ कोहनी से सीने पर लगा कर नृत्य करता है। यह इस बात संकेत करता है कि हनुमान जी पर्वत देवता का एक हिस्सा उखाड़ कर क्यों ले गये? रामलीला होती है पर लीला में हनुमान जी के प्रवेश के बाद के दृश्य का मंचन होता है। यहाँ हनुमान जी से कोई द्वेष नहीं, बस नाराज़गी है। हनुमान जी अति पूजनीय हैं, सम्मानीय हैं, पर इसके साथ-साथ उनसे नाराज़गी भी है।

पहाड़ के लोगों के रिश्ते जंगल, ज़मीन, जल और पहाड़ से हैं। यह सब हमारे लिए इतना महत्त्व रखते हैं कि यदि कोई हमारे पहाड़ से छेड़-छाड़ करेगा, जंगल को क्षति पहुँचाएगा, तो हम मनुष्य तो छोड़िए अपने देवी-देवताओं से भी नाराज़गी रख सकते हैं, क्योंकि वे हमारे अपने हैं। लोकगीतों में आई गौरा (पार्वती) मायके से आये संदेशवाहक से सबसे पहले पूछती है कि, मेरे मायके के खेत, पहाड़, जंगल कैसे हैं? फिर प्रश्न करती हैं कि, मेरी माता मैणावती और पिता हेमंत (हेमवंत) कैसे हैं? संदेशवाहक कहता है: कुशल है तेरे मायके के पहाड़, जंगल और खेत, कुशल हैं तेरे माता-पिता।

पहाड़ के लोगों के पहाड़ ही ईश्वर हैं, यहाँ ईश्वर भी रिश्तेदार है और पहाड़ भी रिश्तेदार हैं।

डॉ. मेधा भट्ट
परिवार सदस्य, प्रो. वासवी भट्ट

हरित श्रृंगार एक वृक्ष

कहा जाता है कि एक वृक्ष सौ पुत्रों के बराबर होता है, बस फिर क्या था हमने भी सोचा क्यों न एक वृक्ष लगाया जाय कम से कम यह वृक्ष उन पुत्रों से तो बेहतर ही होंगे जो बुढ़ापे में वृद्ध माता-पिता को वृद्धाश्रम छोड़ आते हैं।

हम भी निकल पड़े वृक्ष की तलाश में और पहुंच गए पौधशाला पीपल का वृक्ष लिया। इस वृक्ष को लेने का एक कारण यह भी था की शास्त्रों में इसे ज्यादा प्राणवायु उत्पन्न करने वाला माना गया है जिसे आज की भाषा में या कहिए वैज्ञानिक भाषा में ऑक्सीजन कहते हैं।

वृक्ष को लेने में बहुत तकलीफ तो नहीं हुई परन्तु अब सबसे बड़ी चुनौती थी इस वृक्ष को लगाना और उससे भी बड़ी चुनौती थी, इसका पालन पोषण करना जिस प्रकार पुत्रों का किया जाता है। अन्यथा सरकारें आजकल 15करोड़ -20करोड़ वृक्ष लगाने का दावा करती हैं गिनीज बुक में नाम दर्ज कराती हैं परन्तु धरातल पर जीवित वृक्षों की संख्या कम ही होती है इसका प्रमुख कारण उन वृक्षों की देखभाल न हो पाना है।

अब हम निकल पड़े वृक्ष को लगाने के लिए जमीन तलाशने परंतु चुनौती कम होने का नाम ही नहीं ले रही थी इस बढ़ती हुई शहर की आबादी में घनी बस्ती में एक वृक्ष के लगाने की कहीं जगह ही नहीं मिल रही थी चारों तरफ बड़ी इमारतें और लंबी चौड़ी सड़कें , पगडंडी भी पक्की आख़िर वृक्ष लगाएं तो कहां? जिन छोटे क्रीड़ा उद्यानों में गया वहां इतने बड़े वृक्ष को लगाने की जगह नहीं थी और न ही लोगों ने अनुमति दी। लोगों का कहना था यहां जंगल थोड़ी लगाना है। हम इस सोच में डूब गए कि जहां आज ये लोग रह रहे हैं वहां से न जानें कितने बड़े जंगलों को काटा गया है और यहां कंक्रीट का जंगल खड़ा किया गया है। उन पेड़ों के कटने से कितने आसियानें उजड़ गए वह भी केवल इसलिए की मनुष्यों के आसियानों को बसाना है। यही मानवीय प्रवृत्ति हमेशा से रही है कि प्रकृति से खिलवाड़ कर अपने शर्तों पर जीवन जीना। जिसका परिणाम वर्तमान समय में दिख रहा है और भविष्य में भी ज्यादा ही दिखेगा आज पृथ्वी का तापमान लगभग 1.7 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ चुका है वर्षा का प्रकार बदल चुका है कहीं ज्यादा वर्षा तो कहीं सूखे जैसे हालात। आज शहरों की स्थिति यह हो गई है कि वहां का तापमान ग्रामीण क्षेत्रों के तापमान से ज्यादा हो गया जिससे अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो गई है परंतु किसी का ध्यान इस तरफ नहीं है सब विकास की अंधी दौड़ में शामिल हो चुके हैं भविष्य की पीढ़ियों के बारे में सोचना ही नहीं है, यदि हमारे पूर्वजों ने ऐसा किया होता तो हमारे लिए क्या बचता।

यह सोच ही रहा था की हमारे मित्र ने हमें झकझोरा और कहा कि ये वृक्ष नहीं लगाना है क्या जो यहां खड़े हो कर सोच रहे हो, मैंने उत्तर दिया लगाना तो है परंतु इस कंक्रीट के जंगल में कहां लगाऊं। फिर खोजते खोजते आख़िर वह स्थान मिला जहां वृक्ष का रोपण किया जा सकता था, परंतु वह भी शहर के बाहर अब लिया था तो लगाना तो ही था। वृक्ष को लगाया तो लेकिन बात फिर वहीं आकर फंस गई पालन पोषण क्योंकि शहर के लोगों की तरह चार गमले रख कर कैक्टस का पौधा लगा कर उसका पालन पोषण करने वाले वे लोग क्या जानें की वृक्ष की देखभाल कैसे की जाती है। इस चुनौती को भी अब हल करने के केवल दो तरीके थे पहला या तो स्वयं शहर के बाहर प्रतिदिन आकर उसकी देखभाल करते या फिर वहां किसी रहने वाले को बोलते। मित्र के सामने दुविधा रखने पर यह तय हुआ कि यहीं किसी व्यक्ति को देखभाल की जिम्मेदारी सौंपी जाय वह भी मासिक भुगतान पर और प्रत्येक सप्ताह स्वयं अवलोकन करने के लिए आया जाय। बात बन गई और सिलसिला शुरू हुआ ठीक उसी प्रकार जैसे शहरों में आया बच्चे को पालने का काम करती है मां और पिता का केवल एक ही कर्तव्य होता है कि बच्चे से समय समय पर ही मिला जाय।

इतना कठिन होता है एक वृक्ष को लगाना आज समझ आया। हमारे पूर्वजों ने तो बड़े बड़े बगीचे तैयार किए थे। हमने सब बगीचों को काट डाला हमारे पूर्वजों ने हमें हंसती खेलती प्रकृति सौंपी थी परंतु हम अपने आने वाली पीढ़ी को क्या देंगे? शायद यह कि पृथ्वी को रहने लायक ही न छोड़ें।

नीरज मिश्रा
परिवार सदस्य, प्रो. जंगबहादुर सिंह

परिश्रम

परिश्रम ही सफलता की चाभी है। हम अगर सिर्फ बैठ कर सुनहरे सपने देखेंगे तो उससे कुछ नहीं होगा। हमे अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए कड़ी मेहनत करनी होगी। परिश्रम करने के लिए हममे इच्छा शक्ति होना ज़रूरी है। मैंने अपने आस-पास कई लोगों को बहुत मेहनत करते हुए देखा है, जैसे हमारे घरों में काम करने वाली आंटी लोग, सिक्योरिटी गाड़्स, और दूध वाले अंकल आदि। परिश्रमी लोग प्रायः अनुशासित होते हैं। हमे उनसे सीखना चाहिये। हमारे जीवन में कई बार काफी बाधाएँ आती हैं, हमें उनसे डरना नहीं चाहिए बल्कि परिश्रम करके उनको पार करना चाहिए। कठिनाई जितनी बड़ी हो मेहनत भी उतनी ही ज़्यादा करनी होती है। और यह ज़रूरी नहीं कि हम मेहनत करके हर बार सफल ही हों लेकिन हमें हिम्मत नहीं हारनी चाहिये। जब हम कुछ नया सीखना चाहते है तब वह शुरुआत में बहुत मुश्किल लगता है। कुछ साल पहले, जब मैं तैराकी सीखने की कोशिश कर रही थी तब मुझे वह बहुत कठिन लग रही थी पर मैं कोशिश करती रही और आखिर में मैंने सफलता पायी। इसलिए मुझे लगता है की हमें परिश्रम करने का अभ्यास करना चाहिये।

अनन्या दीक्षित
परिवार सदस्य, प्रो. बिपिन दीक्षित

टाइम मशीन

यह असाधारण कहानी कुछ साल पहले शुरू हुई जब प्रोफेसर राधाकृष्णन् अपने सबसे बड़े और अजीब प्रोजेक्ट पर काम कर रहे थे। वह एक मशीन बना रहे थे जो कि कोई साधारण मशीन नहीं एक टाइम मशीन थी। वो अपने इस प्रोजेक्ट को बहुत गोपनीय रखना चाहते थे। इसलिए इस प्रोजेक्ट के बारे में उन्होंने सिर्फ अपने सबसे अच्छे दोस्त डॉक्टर केशव को ही बताया था। एक दिन जब केशव अपने ऑफिस पहुंचे तो उन्हें उनकी मेज पर एक लिफाफा मिला। लिफाफे के ऊपर भेजने वाले का नाम और पता नहीं लिखा था। वह एक गोपनीय पत्र लग रहा था फिर केशव ने लिफाफे के अंदर से पत्र निकाला और उसे पढ़ा। उसमें लिखा था -सामने वाले रेस्टोरेंट में जाओ ओर उसके पीछे वाले दरवाजे से बाहर निकलो वहाँ से 11 कदम चलो और उसके बाद 30 कदम दाएं तरफ चलने पर एक कूड़ेदान मिलेगा, उसका ढक्कन खोलकर उसमें कूद जाओ। यह सब पढ़कर डॉक्टर केशव को बड़ा अजीब लगा। उन्होंने थोड़ा सोचा फिर सोचा कि चलो चल के देखते हैं क्या एड्वेंचर होने वाला है।

वह पत्र के निर्देशों का पालन करते हुए कूड़ेदान में कूद गए वह एक छोटा टनल था, जिसके अंत में एक छोटा सा दरवाज़ा था। उन्होंने दरवाज़े को सावधानी से खोला और देखा कि वह उनके दोस्त प्रोफेसर राधाकृष्णन् का लैब था। उन्होंने डॉक्टर केशव को देखा और बोला आओ मेरे दोस्त तुम्हारा स्वागत है। डॉक्टर केशव ने चारों तरफ देखा उनको यह सब बहुत अजीब लग रहा था। फिर प्रोफेसर ने पूछा मित्र तुम्हे मेरा ये नया लैब कैसा लगा। डॉक्टर केशव ने बोला क्या अद्भुत लैब है प्रोफेसर। और फिर प्रोफेसर ने डॉक्टर केशव को अपनी नई खोज टाइम मशीन दिखाई। जिसे देख कर केशव सोच में पड़ गए उन्होंने सोचा की क्या सच में आइंस्टाइन की थ्योरी सही है समय के बारे में। फिर प्रोफेसर ने कहा कि हम इस मशीन में यात्रा पर जा रहे हैं। केशव ने आश्चर्य से पूछा कहाँ? प्रोफेसर ने मुस्कुराकर कहा समय में मेरे दोस्त। केशव ने उत्सुकता से पूछा कि क्या सचमुच में ये संभव है? प्रोफेसर ने कहा हाँ ये संभव हैं मेरे दोस्त। मैंने बहुत सालों के रिसर्च के बाद यह बनाई है। प्रोफेसर ने मुस्कुराकर कहा ये काम करती है कि नहीं ये पता लगाने का तो एक ही तरीका है। फिर डॉक्टर केशव ने गहरी सांस ली और सोचा ये मशीन शायद काम ना करें। पर दोस्त बोल रहा है तो मुझे एक बार अंदर जाकर जरूर देखना चाहिए। फिर प्रोफेसर के साथ डॉक्टर केशव मशीन में गए उन्हें वहाँ अजीब तरह के कीबोर्ड ओर टैबुलर कॉलम दिखे। अपने सबसे अच्छे दोस्त के कहने के कारण वह यात्रा के लिए तैयार हो गए। यात्रा के दिन प्रोफेसर ने बताया कि हम डायनासोर के समय में जा रहे हैं। और फिर कीबोर्ड पर कुछ टाइप किया जिसके बाद मशीन हिलने लगी और गड़गड़ाहट की आवाज होने के साथ डॉ केशव बेहोश हो गए।

जब उन्होंने आंख खोली तो अपने आप को एक खुली जगह पर पाया। प्रोफेसर ने बोला चलो केशव माउंट किलिमंजारो देखते हैं पर जैसे ही हम पहाड़ के पास पहुंचे ज्वालामुखी फट गया और हम तेजी से वहाँ से भागे ,फिर जंगल में कुछ डायनासोर दिखे। प्रोफेसर डायनासोर के बारे में जानना चाहते थे इसलिए वो एक डायनासोर को छूने लगे। डॉक्टर केशव ने डायनासोर की काफी किताबे पढ़ी थी इसलिए वो जानते की कि यह एक मांसाहारी डायनासोर है। उन्होंने प्रोफेसर को छूने के लिए मना किया पर प्रोफेसर ने उनकी बात नहीं मानी और डायनासोर ने उनकी उँगली काट ली। फिर दोनों ने मिलकर वहाँ पड़ी कुछ मजबूत हड्डियों से उस डायनासोर को भगाया। तब तक केशव को आसमान की तरफ से कुछ लाल चीज़े आती दिखाई दी उन्होंने आसमान की तरफ उँगली दिखाकर बोला प्रोफेसर देखिए वह क्या है, और प्रोफेसर ने बोला जल्दी मशीन की तरफ भागो यह एस्टरॉयड है।

फिर दोनों मशीन के अंदर आ गए और वहाँ पर प्रोफेसर राधाकृष्णन् ने 16 जुलाई 2024 मशीन में टाइप किया और मशीन एक तेज गड़गड़ाहट के साथ घूमने लगी और जब हमारी आंख खुली तो हम लैब में थे, प्रोफेसर राधाकृष्णन् ने कहा क्या यात्रा थी। पर डॉक्टर केशव बस खाली जगह को देख रहे थे और सोच रहे थे क्या अद्भुत यात्रा थी।

केशव सिंह
परिवार सदस्य, प्रो. जंगबहादुर सिंह

समुद्र कन्या

मैं समुद्र कन्या हूँ। मैं समुद्र की लड़की हूँ, जिसे अक्सर लोग जलपरी भी बुलाते हैं। मेरे पिताजी समुद्र राजा है। मेरे दोस्त समुद्र में रहने वाली मछलियाँ है। मुझे मेरे दोस्तों के साथ गहरे समुद्र में खेलना बहुत पसंद है। हम कभी-कभी समुद्र तट पर भी खेलने के लिए आते हैं। मेरे सारे दोस्त समुद्र में तैरना जानते हैं। मुझे ऐसा लगता है कि आप सभी को भी तैरना सीख लेना चाहिए।

के एम हर्षिता
परिवार सदस्य, के मुथुकुमारन

प्रकृति

हम अपने आसपास में जो कुछ भी देखते हैं वह प्रकृति का हिस्सा है। जिसमें सूर्य ,चंद्रमा, पेड़, फूल, मनुष्य, पक्षी और जानवर आदि शामिल हैं। पारिस्थितिक तंत्र को स्वस्थ रखने के लिए हर प्राणी एक-दूसरे से जुड़ा हुआ है और एक दूसरे पर निर्भर करता है। प्रगति हमें आत्मा जीवन, भोजन, पानी, आश्रम, दवाइयाँ और कपड़े आदि प्रदान करती है। प्रकृति में पाए जाने वाले विविध रंग हमारे ग्रह की सुंदरता को बढ़ाते हैं। मनुष्यों के साथ-साथ पशु पक्षी भी प्रकृति में अपना निवास और जीवित रहने के साधन ढूंढते हैं। इसलिए स्वस्थ जीवन को बनाए रखते हैं।

के एम हर्षिता
परिवार सदस्य, के मुथुकुमारन

एक सुंदर पौधा

मैंने एक गमले में मिट्टी भरी और उसमें एक पौधा लगाया। उसमें हर रोज दिन में दो बार, सुबह और शाम पानी डाला करता था। धीरे-धीरे वह पौधा बड़ा होता गया। उसमें पहले पत्ता लगना शुरू हुआ और कुछ दिन में वह पौधा और भी बड़ा हो गया। पहले उसमें फूल लगने लगा और कुछ दिनों के बाद फल आने लगे। मैंने अपने परिवार के साथ फल खाया। मुझे बहुत मजा आया। वह फल बहुत मीठा था वह फल सुंदर था और हम सभी ने इसकी मिठास और सुंदरता का आनंद लिया।

के एम हरीश
परिवार सदस्य, के मुथुकुमारन

मंडला कला, एक प्राचीन कला रूप है जो बिंदुओं, रेखाओं और आकारों के माध्यम से एक केंद्रित और संतुलित चित्रण प्रस्तुत करती है। यह कला न केवल सौंदर्य को दर्शाती है बल्कि इसका उद्देश्य शांति, ध्यान और आत्मज्ञान प्राप्त करना है। यह कला असीम धैर्य और एकाग्रता का प्रतीक है और मानसिक शांति को भी बढ़ावा देती है।

दीपिका जैन
पीजीसीबीएए05

ऋग्वेद तिडके
पीजीपीएम

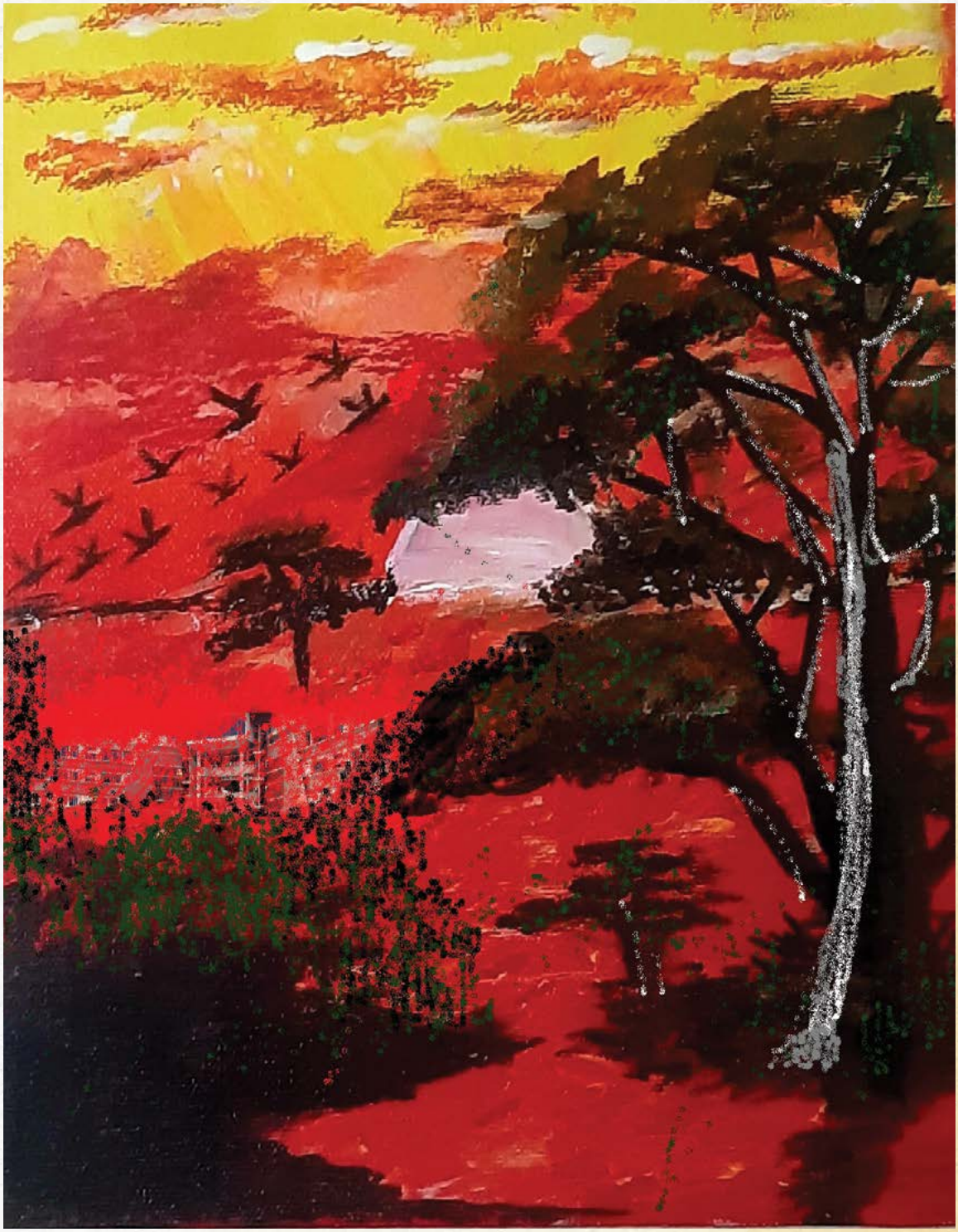

रोशनी के बाद अंधकार का आना तय है, जैसे प्रकृति के समन्वय में, हमेशा एक आदर्श संतुलन होता है।

शालिनी वी
संकाय सदस्य, भारतीय प्रबन्धन संस्थान, तिरुचिरापल्ली

लद्दाख की वादियों में एक यात्रा का अनुभव

लद्दाख की ओर प्रस्थान,
मन में एक हलचल, एक अजनबी ख्वाब।
फैसला लिया, छलांग भरने का,
आरंभ में था संकोच, पर साहस ने थामी डोर।

क्या यह यात्रा महत्वपूर्ण थी? नहीं,
परंतु लौटकर पाया, लद्दाख का हिस्सा मुझमें था।
क्या दोस्तों के साथ जाना था? नहीं,
इस यात्रा ने मित्र बनाए, आत्मीयता जगाई।

क्या इस सफर की जरूरत थी? नहीं,
यह नियति का खेल था, पहाड़ों की पुकार।
पहाड़ों से मिला शांति का संदेश,
जीवन की हलचल में पाया खोया हुआ चैन।

समुद्र से दूर, पर्वतों का बुलावा,
एक अनकही आवाज, दूर से सुनाई दी।
इस सफर ने मन को स्थिर किया,
और पहचाना मन की उस उथल पुथल को,
जो इन वादियों में आकर ठहर सी गयी।

यह यात्रा है वो कविता,
जिसमें हर पहाड़ एक नया किस्सा सुनाता है
हर मोड़ पर एक नया अहसास,
जिंदगी की दौड़ में खोया हुआ सुकून किसे याद आता है

लद्दाख की वादियों में,
एक नयी दिशा, एक नया आयाम पहचाना।
यह यात्रा, एक अनमोल याद,
जिसने जीवन को फिर से जीना सिखाया।

यह चित्र मन की गहराइयों से,
हर रंग, हर छाया, एक कहानी कहता।
यह तस्वीर, उस साहस का प्रतीक,
जो मुझे अनजानी राहों पर ले जाता।

यह सफर नहीं, एक दर्शन था,
जीवन की सच्चाईयों को समझने का।
यहां हर पत्थर, हर पहाड़,
मानो सिखाता है हमें, जीवन का मूल मंत्र।

यादों में बसा, लद्दाख का वो सफर,
एक नया सफर, एक नयी शुरुआत।
इस अनुभव ने मन को स्थिरता दी,
और जीवन को नयी दृष्टि से देखा।

लद्दाख की यह यात्रा,
सिर्फ एक स्थान नहीं, एक अहसास।
जो जीवन में बार-बार लौटता,
और हमें याद दिलाता है, जीने का सच्चा आनंद।

चारु त्रिपाठी
पीजीपीबीएम'24

फ़ोटो लिया गया: *हरि प्रसाद श्रीधर, पीजीपीबीएम'24*

मरीचिका (ज्ञान चतुर्वेदी)

पाश्चात्य चिंतक जॉनथन स्विफ्ट व्यंग्य के विषय में कहते थे, "व्यंग्य एक ऐसा दर्पण है जिसमें देखने वाले को अपने अतिरिक्त सभी का चेहरा दिखता है." इस विधा का मुख्य उद्देश्य है, व्यक्ति और उसके सामाजिक संदर्भों में दिखने वाली किसी भी विसंगति पर कुठाराघात करना, भले ही यह संदर्भ, व्यक्ति और समाज के संबंध का हो सकता है, वर्ग और जाति के समीकरण का हो सकता है या विभिन्न विचारधाराओं के टकराव का हिन्दी में व्यंग्य विधा से आज शायद ही कोई अपरिचित हो। आज भी व्यंग्य की परंपरा में हरिशंकर परसाई, शरद जोशी, रवीन्द्र नाथ त्यागी, श्रीलाल शुक्ल एवं ज्ञान चतुर्वेदी का नाम सम्मान से लिया जाता है। सच कहा जाए तो जिस विट और व्यंजना से लैस इन व्यंग्यकारों का रचना संसार रहा है, वह लाजवाब है।

हिन्दी के सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार ज्ञान चतुर्वेदी किसी भी परिचय के मोहताज़ नहीं हैं। व्यंग्य विधा को अपने सुदृढ़ और आधुनिक रूप में खड़ा करने में ज्ञान चतुर्वेदी के योगदान को आलोचकों ने एक सिरे से स्वीकार किया है।

विख्यात व्यंग्यकार तथा उपन्यासकार ज्ञान चतुर्वेदी का यह तीसरा उपन्यास है। उनके पिछले दो उपन्यासों-'नरक यात्रा' और 'बारामासी' का हिन्दी पाठक जगत् ने तो अप्रतिम स्वागत किया ही, साथ ही विभिन्न आलोचकों तथा समीक्षकों ने इन्हें हिन्दी व्यंग्य तथा उपन्यास के क्षेत्र की उल्लेखनीय घटना के रूप में दर्ज किया है।

'मरीचिका' हमें नितान्त नए ज्ञान चतुर्वेदी से परिचित कराती है। इस पौराणिक फैंटेसी में वे भाषा, शैली, कथन तथा कहने के स्तर पर एकदम निराली तथा नई ज़मीन पर खड़े दीखते हैं। यहाँ के व्यंग्य को एक सार्वभौमिक चिंता में तब्दील करते हुए 'पादुकाराज' के मेटाफर के माध्यम से समकालीन भारतीय आमजन और दरिद्र समाज की कथा-व्यथा को अपने बेजोड़ व्यंग्यात्मक लहजे में कुछ इस प्रकार कहते हैं कि पाठक के समक्ष निरंकुश सत्ता का भ्रष्ट तथा जनविरोधी तंत्र, राजकवि तथा राज्याश्रयी आश्रमों के रूप में सत्ता से जुड़े भोगवादी बुद्धिजीवी और पादुकामंत्री सेनापति- पादुका राजसभा आदि के जरिए आसपास तथाकथित श्रेष्ठजनों के बीच जारी सत्ता-संघर्ष का मायावी परन्तु भयानक सत्य-सब कुछ अपनी संपूर्ण नग्नता में निरावृत्त हो जाता है।

'पादुकाराज', 'अयोध्या', तथा 'रामराज' के बहाने ज्ञान चतुर्वेदी मात्र सत्ता के खेल और उसके चालाक कारकों का ही व्यंग्यात्मक विश्लेषण नहीं करते हैं, वे मूलतः इस क्रूर खेल में फँसे भारतीय दरिद्र प्रजा के मन में रचे-बसे उस यूटोपिया की भी बेहद निर्मम पड़ताल करते हैं जो उस 'रामराज' के स्थापित होने के भ्रम में 'पादुकाराज' को सहन करती रहती है। जो सदैव ही मरीचिका बनकर उसके सपनों को छलता रहा है।

स्वर्ग तथा देवता की एक समांतर कथा भी उपन्यास में चलती रहती है, जो भारत के आला अफसरों की समांतर परन्तु मानो धरती से अलग ही बसी दुनिया पर बेजोड़ टिप्पणी बन गई है। जब अयोध्या ब्रह्मांड तक जल रही हो, तब भी देवता की दुनिया में उसकी आँच तक नहीं पहुँचती। आधुनिक भारत के इन 'देवताओं' का यह स्वर्ग ज्ञान के चुस्त फिकरों, अद्भुत विट और निर्मल हास्य के प्रसंगों के जरिए पाठकों के समक्ष ऐसा अवतरित होता है कि वह एक साथ ही वितृष्णा भी उत्पन्न करता है और करुणा भी। और शायद क्रोध भी। पौराणिक कथा के बहाने आधुनिक भारत की चिंताओं की ऐसी रोचक व्यंग्य कथा बुन पाना ही पुनः ज्ञान चतुर्वेदी को हिन्दी के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण गद्यकार के रूप में रेखांकित करता है।

"भरत का यह क्रांतिकारी निर्णय कि राम की पादुकाएं सिंहासन पर आरूढ़ होंगी, कितना पवित्र, त्यागमय और प्रगतिकामी पग था। वे चाहते थे कि राम पादुका की सांकेतिक सत्ता के माध्यम से अंततः अयोध्या के सामान्य जन के करों में आ जाये। कैसा युगांतकारी निर्णय। सत्ता की लालसा से भरे संसार के कीचड़ में कमल सा।.... परंतु कमल के साथ यही कठिनाई होती है कि कमल स्वयं में लाख कमल हो, संपूर्ण शक्ति से कमल हो, कमल ही कमल हो एवं नित्य और कमल होता चला जाये, परंतु वह अपने आसपास के

कीचड़ को परिवर्तित नहीं कर पाता।.... कमल जब तक अपनी संपूर्ण पवित्रता के साथ कीचड़ में रहने को तत्पर है, तब तक कीचड़ के मन में कमल के लिए आदरणीय स्थान है। आप कमल रहिए, हमें कीचड़ बने रहने दीजिए।... भारत के इस पवित्र विचार के साथ भी यही हुआ।" (किताब से उध्दरण)

हमारे आसपास एक तरह की हताशा चारों तरफ़ नजर आ रही है। यह मोहभंग का भी दौर है। अपने उपन्यास में ऐसे निराशा भरे महौल में उन्होंने समाज की विसंगतियों को चुटीली शैली में सामने लाया है। इसी तरह की अलंकृत नए शब्दावली के साथ यह उपन्यास हमारे चेतन पर गम्भीर चोट करता है। सारे के सारे पात्र और उनकी शैली आपको खूब हंसाएगी भी और रुलायेगी भी। जब आप भारत की वास्तविक दुर्दशा का चित्रण इस अंलकृत हिन्दी में पढ़ते हुए गंभीरतापूर्वक सोचेंगे तो कटुसत्य से परिचय होगा। यह व्यंग्य हमारे ऊपर ऐसा प्रहार है.. यह हमें सोचने के लिए विवश करता है। लेखक की अपनी एक अर्जित भाषा शिल्प है, जो उन्हें बाकी व्यंग्यकारों से अलग तो बनाती ही है, साथ ही भाषा का एक नया संसार भी रचती है। प्रस्तुत कृति में भी भाषा के जरिए एक जादू बिखरने की कोशिश की गई है। अगर आप यथार्थ को सीधा नहीं व्यंग्य की चाशनी के साथ पगाकर पढ़ने में यकीन करते हैं तो ज्ञान की यह किताब आपके लिए है।

अंकित सिंह
परिवार सदस्य, प्रो. जंग बहादुर सिंह

शिवांगी सिंह
पीजीपीएम

आसमान की ऊँचाइयों को छूते बादल,
हवा की झोंके जो आत्मा को छू जाती हैं,
फूल जो पुरानी यादों की गूंज सुनाते हैं,
और यहाँ मैं, सपने की राह पर बढ़ते हुए।

समीर सरकार
पीजीपीएम-एइच-आर-26

हिन्दी दिवस समारोह, 2023

ज्ञानम् अनन्तम्

IIM
TRICHY

भारतीय प्रबन्धन संस्थान तिरुचिरापल्ली

Indian Institute of Management Tiruchirappalli

Pudukkottai Main Road, Chinna Sooriyur Village

Tiruchirappalli - 620 024, Tamil Nadu

www.cygnusadvertising.in